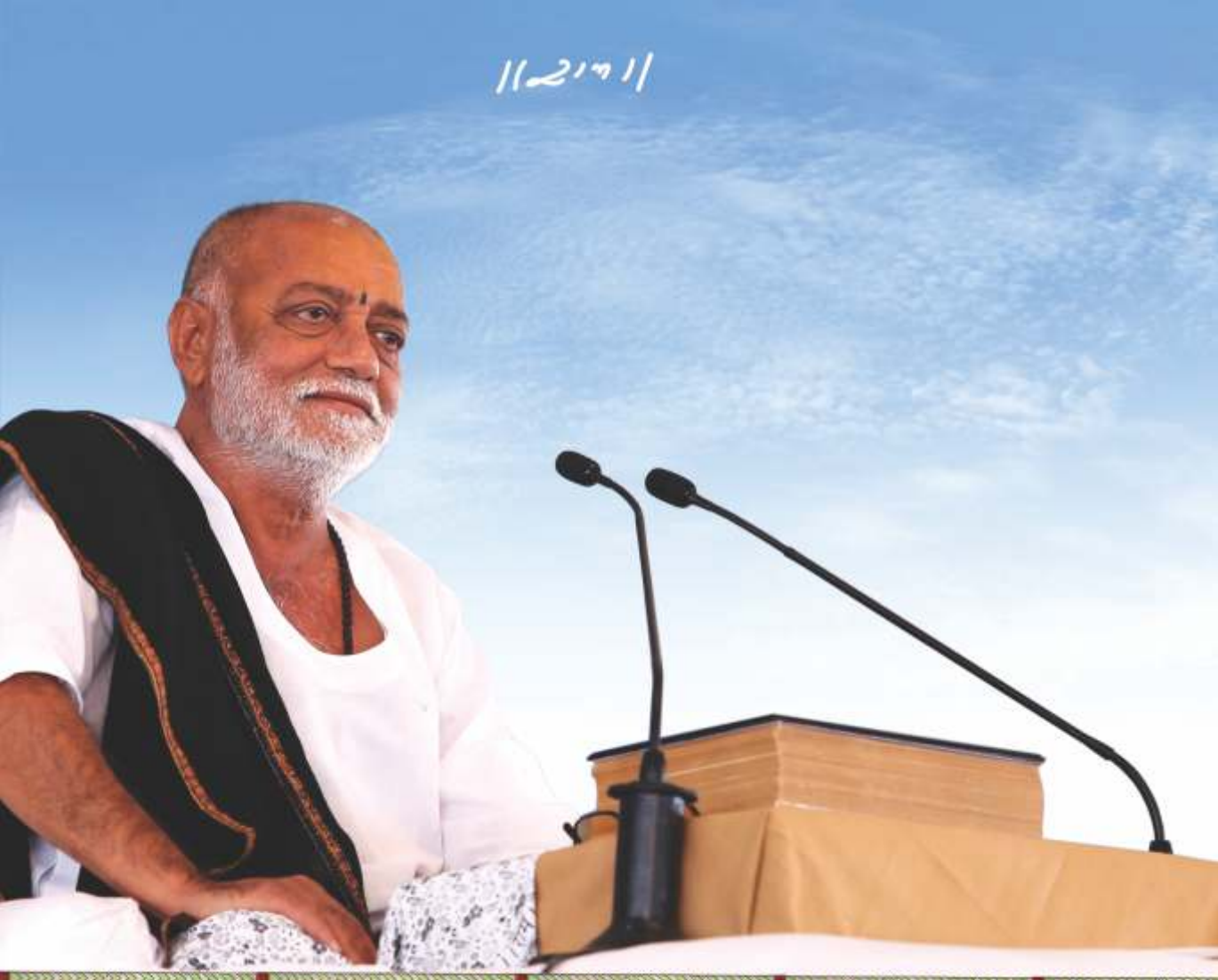

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस-मंगलभवन कच्छ (गुजरात)

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी।।

.१.

यहां एक ओर रणोत्सव है, दूसरी ओर रामोत्सव है।

.२.

राम मंगलभवन है, भगवान का नाम मंगलभवन है
और स्वयं 'रामचरित मानस' भी मंगलभवन है।

.३.

राम की कथा सुखभवन है।

.४.

संत-समागम का सुख यह आध्यात्मिक सुख है।

.५.

यह जगत मंगलभवन है, उसमें कुछ विशेष मंगल है।

.६.

साधक की खोज मंगल और विशेष मंगल तत्त्व की होती है।

.७.

जाप सांप्रदायिक हो सकता है, पर स्मृति बिनसांप्रदायिक होती है।

.८.

'रामचरित मानस' प्रेमशास्त्र है, प्रेमसूत्र का संग्रह है।

.९.

साधु सुमंगल है, बुद्धपुरुष के वचन सुमंगल है।

।। रामकथा ।।

मानस-मंगलभवन

मोरारिबापू

कच्छ (गुजरात)

दिनांक : १०-०१-२०१५ से १८-०१-२०१५

कथा-क्रमांक : ७६९

प्रकाशन :

अक्टूबर, २०१५

प्रकाशक

श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,

तलगाजरडा (गुजरात)

www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट

© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक

नीतिन वडगामा

nitin.vadgama@yahoo.com

हिन्दी अनुवाद

प्रो. कमल महेता

राम-कथा पुस्तक प्राप्ति

सम्पर्क-सूत्र :

ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स

स्वर अेनिम्स

प्रेम-पियाला

मोरारिबापू ने कच्छ (गुजरात) के सफेद रण में दिनांक १०-१-२०१५ से १८-१-२०१५ दरमियान रामकथा का गान किया। रण में आयोजित यह रामकथा 'मानस-मंगलभवन' विषय पर केन्द्रित हुई। रण प्रदेश की रेत में रामकथा के निमित्त बिना हेतु हुआ यह हेतयज्ञ को विशिष्ट ढंग से अर्थघटित करते हुए बापू ने कहा, ''जहां नदियां मिलती हो, जहां परिपूर्ण मात्रा में जलराशि हो, वहां तो कुंभमेला होता ही है, लेकिन यह तो रण में छोटा-सा कुंभमेला है। यह रण का कुंभ है। यहां एक ओर रणोत्सव है, दूसरी ओर रामोत्सव है।

'मानस' में निर्दिष्ट मंगलभवन, कोपभवन, सुखभवन, दशरथभवन इत्यादि प्रत्येक भवन के तात्त्विक अर्थ प्रति बापू ने संकेत किया और नव दिवसीय रामकथा अंतर्गत मंगलभवन का विशिष्ट अर्थघटन किया। बापू का ऐसा सूत्रात्मक निवेदन भी रहा कि राम मंगलभवन है, भगवान का नाम मंगलभवन है और स्वयं 'रामचरित मानस' भी मंगलभवन है।

बापू ने मंगल एवम् अमंगल के भेद का स्वीकार न किया बल्कि अपना निजी दृष्टिकोण प्रकट करते हुए ऐसा कहा कि यह पूरा जगत मंगल तत्त्व से भरा हुआ है, मंगलभवन है। यहां मंगल-अमंगल के बीच भेद नहीं है। यहां सब मंगल है, कुछ विशेष मंगल है। तदुपरांत बापू ने कहा कि साधक की शोध मंगल और विशेष मंगल तत्त्व की होती है।

तुलसीदासजी ने जिसका निर्देश किया है, ऐसी सात परम मंगल वस्तुओं का विशद परिचय भी बापू ने दिया कि यह सात वस्तु परम मंगल है। सुधा माने अमृत मंगलमय है। कौन-सा अमृत मंगलमय? परमहंस शुकदेव ने ऐसा गाया कि कृष्ण की कथा अमृत है। इसलिए कथा मंगलमय है। दूसरा अमृत; तुलसी कहते हैं, राम का नाम अमृत है। राम की कथा अमृत है। जो वचन हमारे मोहरूपी अंधकार का नाश करे ऐसे किसी बुद्धपुरुष के वचन मंगल है। तीसरा सुरतरु माने कल्पवृक्ष। 'रामायण' स्वयं कल्पवृक्ष है। सुमन; फूल को मंगल कहा है। सुफल, अच्छा फल। एक ऐसा फल जो अकेले नहीं, बांटकर खाये वह मंगल है। हमें कहनी अच्छी लगे, दूसरों को भी अच्छी लगे ऐसी किसी अच्छी बात को परम मंगल की पदवी तुलसीदासजी ने दी है। सीतापति की भक्ति, कोई भी भक्ति, उसकी ओर प्रेम परम मंगल है।

मोरारिबापू द्वारा रण में हुआ कथागान यों अनेकश: विशिष्ट रूप प्रकट कर सम्पन्न हुआ।

– नीतिन वडगामा

यहां एक ओर रणोत्सव है, दूसरी ओर रामोत्सव है

मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।
मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी।।

बाप, कच्छ की भूमि पर आप सबके सामने रामकथा गाने का अवसर प्राप्त हुआ है। भगवद्कृपा और इस रामकथा में जिनकी आशीर्वादक उपस्थिति है, ऐसे हमारे सभी पूज्यचरण, संत-महंतगण हमारे समाज के विविध क्षेत्र के आदरणीय जन, गुरुजन, आप सब मेरे श्रावक भाई-बहन और सबको व्यासपीठ पर से मेरे प्रणाम। एक भजन की पंक्ति है, बाप!

खेतर खेडी रूडां पाणी पातां तारा, ए अनाज आपे छे खेत,
पण रणमां कोई मूठी न वावे, ज्यां कोरी ऊडे छे रेत,
जगतमां हेतु रे विनानां न होय हेत.

रण में रेत में रामकथा यह 'हेतु रे विनानां न होय हेत', इस पंक्ति को यहां से वहां कर देती है। किसी भी हेतु के बिना प्रेमयज्ञ का आरंभ होता है। पूर्वजों की कमाई को वंदन। नदियां इकट्ठी होती हो, परिपूर्ण मात्रा में जल हो, चाहे वह हरिद्वार हो, नासिक-त्र्यंबक हो, उज्जैन हो या प्रयाग तीर्थराज हो, वहां कुंभमेला होता है। यह रण का कुंभ है। यहां एक ओर रणोत्सव है, दूसरी ओर रामोत्सव है। इसके पीछे कोई हेतु नहीं है। यह मोतियों को पिरोने की बेला है। हमारा एक-एक पल किस तरह जाता है, इसका उल्लेख अस्तित्व में है। प्रतिपल मानव के विचार बदलते रहते हैं।

जैनधर्मानुसार एक-एक पल विचार में से प्रकट फल परिवर्तित होते हैं।

भगवान महावीर स्वामी के पास शुरू से रहते उनके राजा मित्र ने इच्छा प्रकट की कि महावीर स्वामी के दर्शन हेतु जाना है। वे निकलते हैं कि रास्ते में एक दूसरा राजा मिल जाता है। वे भी शुरू में उनका मित्र था। वह राजा भगवान महावीर की तरह खड़े होकर तपस्या करता है। उसका नाम प्रसेनचंद्र है। जो राजा भगवान महावीर के दर्शन हेतु निकला है उसने उस राजा को भगवान महावीर की तरह खड़ा देखा तब उसे ग्लानि हुई कि हम तीनों साथ रहते थे और इसने कितनी प्रगति की और मैं पीछे रह गया! ऐसा सोचते-सोचते वह राजा भगवान महावीर स्वामी के पास पहुंचता है। प्रश्न पूछता है, भगवन्, आप तो परम है; मुझे इसका आनंद है,

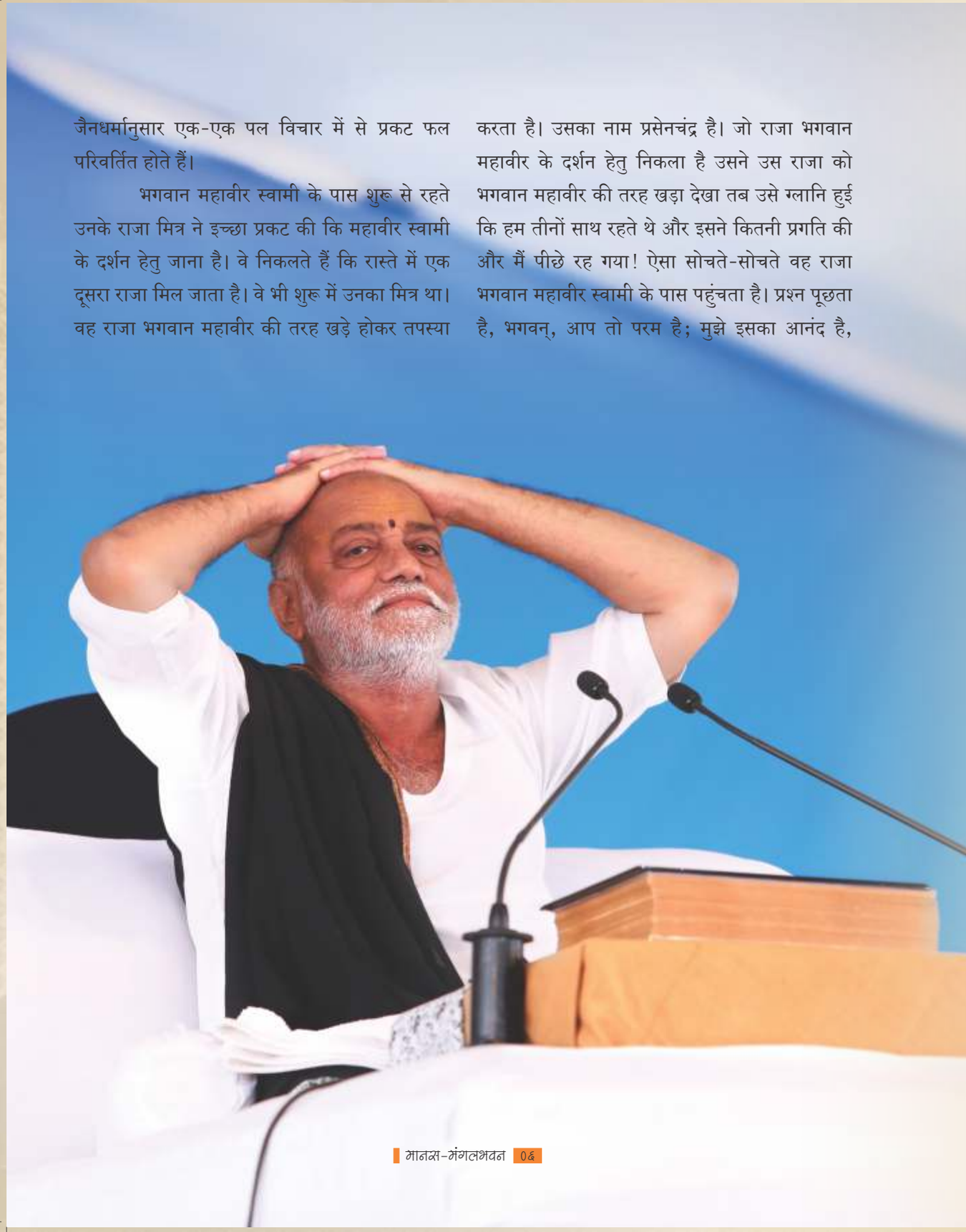

हमउम्र, मित्र रहे हैं। धन्य है वह राजा, जो हमारा बाल सखा रहा है वह आपके नक्शे कदम पर चलकर कठिन तपस्याव्रत कर रहा है। मैं चुक गया! भगवन्, मैं आप से एक प्रश्न पूछना चाहता हूं कि मैं उस राजा को खड़ा हुआ देख आया हूं इसी क्षण यदि उसकी मृत्यु हो जाय तो उसकी गति कैसी होगी? भगवान महावीर स्वामी ने उत्तर दिया कि 'इस क्षण मृत्यु हो जाय तो सातवां नर्क मिलेगा!'

सरगु नरकु अपबरगु समाना।
जहँ तहँ देख धरें धनु बाना।।

'मानस' में गोस्वामीजी लिखते हैं साधु, स्वर्ग, नर्क और अपवर्ग को एक समान मानता है। स्वर्ग में भी राम दिखे ऐसी जिसकी सम्यक् दृष्टि उत्पन्न हो। 'मानस' में भी नर्क का वर्णन आता है। गोस्वामीजी कहते हैं, एक बार केवल राम भज ले वह स्वयं पार लग जायगा पर आसपास के लोगों को भी पार लगाता जायगा। 'मानस' में आया शब्दब्रह्म बहुत विचारणीय है। 'रामचरित मानस' यह अस्तित्व की एक व्यवस्था है। इसलिए उसका एक-एक शब्द गहरा है।

मुझे बड़ौदा में अभी एक व्यक्ति पूछ रही थी, 'बापू, मोक्ष का रास्ता बताइए।' यह मोक्ष क्या है! पता नहीं, आपको मोक्ष मिलेगा तो क्या करोगे? पड़े रहो न यूं ही! मैं 'मानस' की कथा कह रहा हूं तब सारे शब्द 'मानस' की दृष्टि से तलगाजरडा की आंखों से देखने पड़ेंगे। प्रथम अक्षरब्रह्म फिर शब्दब्रह्म जुड़ता है। फिर जो शब्द प्रकट होता है इसके पीछे तुलसी की गहरी दृष्टि है। जिस-जिस अक्षरब्रह्म के साथ 'रण' शब्दब्रह्म जुड़ता है, 'मानस' में इसकी अद्भुत महिमा है। तरण और तारण, स्मरण और मरण, शरण और चरण; 'मानस' में इसका भरपूर उपयोग हुआ है। रण में उगाना है।

पोलुं छे इ वाग्युं एमां करी तें शी कारीगरी?
सांबेलुं वगाडे तो हुं जाणुं के तुं शाणो छे.

- दलपतराम

फूंक के कितने प्रकार है? ज्यों 'फेरे रे फेरे जाजो फेर', यों तलगाजरडा का रूखडबावा कहता है -

रूखड बावा तुं हळवे हळवे हाल्य जो,
गरवाने माथे रे रूखडियो झळुंबियो,
जेम झळुंबे रण माथे मेघ जो...
एवो गरवाने माथे रे रूखडियो झळुंबियो.

'मानस' में आया शब्दब्रह्म विचारणीय है। धन्य है मेरे देश का भजनिक; उसने मोक्ष नहीं चाहा। चाहा तो 'देजो अमने संतचरणमां वास।' भगवतीकुमार शर्मा की कविता है -

हरि, मने अढी अक्षर शिखवाडो!
ऐंशीने आरे आव्यो छुं;
मारो अगर जिवाडो!

तो, एक बार जो 'राम' बोले वो तैरे और दूसरों को तारे। तो, अभी 'इस राजा की मृत्यु हो तो सातवां नर्क मिले', भगवान महावीर स्वामी ने कहा। एक क्षण के बाद पुनः बोले 'अब इस समय उसकी मृत्यु हो तो सातों स्वर्ग मिले।' पल-पल लिखा जाता है, साहब! पता नहीं किस पल कौन-सा विचार कैसी फसल देगा? राजा ने कहा, 'भगवन्, मुझे रहस्य समझाइए।' भगवान महावीर स्वामी ने कहा, 'तुमने पूछा उस क्षण तेरे चौकीदार, घुडसवार यहां से गुज़र रहे थे तब वे बोल रहे थे कि 'राजा दरबार छोड़कर, बच्चों को छोड़कर भागा है और तप करने लगे हैं। वह कहां का त्यागी है?' ऐसा बोलते जाते थे तब राजा को एक क्षण के लिए घुडसवारों पर दुर्भाव जगा था। उस क्षण मृत्यु हो

जाती तो सातों नर्क मिलते। एक क्षण के बाद उसे ऐसा लगा कि अब मुझे इससे क्या लेना-देना? मुझे क्या चिन्ता कि कौन क्या बोलता है? मैं तो भगवान महावीर की शरण में हूं। उनकी कृपा से खड़ा हूं। ऐसी सात्त्विक क्षण आई और वह स्वर्ग का अधिकारी हो गया।

कागज़ बहुत बड़ा है। हमारी एक-एक क्षण लिखी जाती है। ऐसे समय में बीजली की चमक में मोती पिरो लेने की बात है। रामकथा धर्मशाला नहीं, प्रयोगशाला है। यह केवल धार्मिक समारंभ नहीं है। रामकथा के राम सांप्रदायिक नहीं है। उन्हें आप जाति की तराजू पर नहीं तोल सकोगे। यह रामतत्त्व कुछ अलग ही है।

तो, ग्यारह फूंक है। माँ की फूंक से घाव भर जाता है। सद्गुरु किसी को कान में फूंक मारते हैं। आपके कान में कोई निंदा करे तो समझिए कि आपके कान में थूंक डाल रहा है! पर आपके कान में कोई राममंत्र डाले तब समझना कि वह फूंक मारता है। तो बाप, 'फूंके फूंके जाजो फेर।'

तो, रण में तरण तारण; रण में तो नमक पकता है। रामरस जहां पके वहां रामरस-गान होना चाहिए। अत: रण में रामकथा। नीतिन वडगामा ने बहुत अच्छी कविता लिखी है। 'रूडी रामकथा छे रणमां।' यह पूर्व आयोजित नहीं है। राजेन्द्र शुक्ल लिखते हैं -

आ अहीं पहोंच्या पछी बस एटलुं समजाय छे.
कोई कंई करतुं नथी, आ बधुं तो थाय छे.

यहां आया तब तक मेरे दिमाग में निश्चित ही नहीं था कि किस विषय पर बोलूं? रण में निश्चित होता है? रेत में जहाज चलाने जैसा है! दिमाग में आया कि 'मानस-मंगलभवन' करना है। कहीं भी नहीं किया है।

मंगल भवन अमंगल हारी।

मंगलभवन, कोपभवन, सुखभवन, जनकभवन, दशरथभवन, सूरभवन, विधिभवन; एक-एक भवन का विशिष्ट अर्थ है। एक तात्त्विक अर्थ है। इस कथा का मूल केन्द्रीय विचार रहेगा 'मानस-मंगलभवन।' 'मंगल भवन अमंगल हारी।' यह हम स्तुति रूप में गाते हैं। वहां भगवान राम के लिए इन शब्दों का उपयोग हुआ है। राम कैसे है? ऐसे राम, दशरथ के आंगन में खेलते राम, 'द्रवउसो दसरथ अजिर बिहारी।' तो एक 'मंगलभवन' शब्द राम के लिए हैं। दूसरा 'मंगलभवन' शब्द रामनाम के लिए हैं।

मंगल भवन अमंगल हारी।
उमा सहित जेहि जपत पुरारी।।

तीसरा, 'मानस-मंगलभवन' कहता हूं तब यह 'मानस' स्वयं मंगलभवन है। इस जगत में कितने प्रकार के मंगल होते हैं, इसकी खोज हम 'रामायण' के आधार पर करेंगे। एक श्लोक है -

मंगलं भगवान विष्णु मंगलं गरुड ध्वंज।
मंगलं पुंडरिकाक्षो मंगलायनो हरि।
ओम मंगलं ओमकार मंगलम्
गुरु मंगलं गुरुपाद मंगलं।
आनंद मंगल करुं आरती,
हरि गुरु संतनी सेवा.
मारे आंगण तुलसीनो क्यारो,
शालिग्रामनी सेवा; आनंद मंगल करुं आरती ...

तो, राम मंगलभवन, प्रभु का नाम मंगलभवन और 'मानस' स्वयं मंगलभवन। मौज करनी। अभी-अभी मैंने कहा है, आदमी को निश्चित कर लेना चाहिए कि उसे कहां रहना है? आदमी को विचार में रहना चाहिए। कैसे विचार करने चाहिए? कब करने चाहिए? इसका

नाप रखना। नहीं तो विचार तो सतत आते ही रहे। हनुमान उदाहरण है। कैसे, कितने, कब और किस प्रकार के विचार?

पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह बिचार।
अति लघु रुप धरौं निसि नगर करौं पइसार।।

राक्षसों में क्या था? राक्षस सोचते ही नहीं थे! विचारों में जीना। विनोद में रहना। मुस्कुराहट मोक्ष है। पूरा तिबेट लाफिंग बुद्धा का सर्जन करता है। गांधीबापू विनोदी थे। सरोजिनी नायडु ने गांधीबापू से पूछा, 'आपकी दृष्टि से जगत की सर्वाधिक सुंदर स्त्री कौन है?' तो गांधीबापू ने कहा, 'कस्तूरबा।' माँ तो बिचारी सीधी सादी! फिर नायडु कस्तूरबा के पास गई। कहा, 'जगत की सर्वाधिक सुंदर स्त्री का नाम बापू ने आपका लिया है।' बा ने कहा, 'बापू कभी भी झूठ नहीं बोलते!' दोनों का यह कैसा आनंद है! इस तरह से जीए।

विचार, विनोद और विश्वास में जीना। यदि विश्वास खो दिया तो जहाज किनारे न लगे। अंधविश्वास नहीं। आदमी तय करे कि मैं किसी को ठगता तो नहीं। विश्वास, विवेक में जीना; उत्पात छोड़कर विश्राम में जीना। दिल्ही के शायर दिलसा'ब फरमाते हैं -

ये जनम तुझे अनमोल मिला,
बरबाद ना कर, बरबाद ना कर।

ऐसी जगह मिल जाय उसमें टिक जाय तो 'पायो परम विश्राम, राम समान प्रभु नाहीं कहूं।'

वाल्मीकि ने कांड तो तुलसीजी ने सोपान लिखे। सात सीढ़ी है। प्रथम सोपान 'बालकांड' है। द्वितीय सोपान 'अयोध्याकांड', तीसरा सोपान 'अरण्यकांड', चौथा सोपान 'किष्किन्धाकांड', पांचवा सोपान 'सुन्दरकांड', छठ्ठा सोपान 'लंकाकांड', सातवां सोपान 'उत्तरकांड' जिसमें जीवन के सभी प्रश्नों के उत्तर है। प्रथम सोपान 'बालकांड' का मंगलाचरण करते तुलसी सात सोपान की रामकथा में सात मंत्र लिखकर शुभारंभ करते हैं।

वर्णानामर्थसंघानां रसानां छन्दसामपि।
मङ्गलानां च कर्तारौ वन्दे वाणीविनायकौ।।

समस्त मंगलकर्ता वाणी विनायक को प्रणाम। प्रथम सरस्वती वंदना। फिर वाणी विनायक की वंदना।

भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यंति सिद्धा: स्वान्त:स्थमीश्वरम् ।।

आदमी को कहां रहना है यह निश्चित कर लेना चाहिए। विचार में रहना तो कैसे विचार करने चाहिए? कब, कहां और कितने विचार करने चाहिए इसका हिसाब रखना चाहिए। नहीं तो विचार निरंतर आते रहते हैं। दूसरी बात कि विनोद में रहिए; मुंह फूलाकर नहीं रहना है। मुस्कराहट मोक्ष है। विचार में जीना, विनोद में जीना, विश्वास में जीना। विश्वास टूटने पर जहाज तट पर नहीं पहुंचता। अंधविश्वास नहीं, विश्वास में जीना। विवेक में जीना और उत्पात छोड़कर विश्वास में जीना।

राम मंगलभवन है, भगवान का नाम मंगलभवन है
और स्वयं 'रामचरित मानस' भी मंगलभवन है

'मानस-मंगलभवन', प्रभु राम स्वयं मंगलभवन है। भगवान का नाम मंगलभवन है। जिस ग्रंथ के आश्रय में हम हैं वह स्वयं 'रामचरित मानस' भी मंगलभवन है। दर्शनशास्त्र का एक नियम है, मैंने कल कहा था कि इस जगत में प्राय: सभी चीजें मंगल है। कहीं-कहीं थोड़ा अमंगल हो तो प्रभु उसे हर लेते हैं; 'मानस' का गायन-श्रवण हर लेता है। अत: जहां तक गुरुकृपा से मेरी समझ है, तब तक यहां सब मंगल है। 'भवन' शब्द तो जुड़ा है; पर एक ऐसा शब्द भी है, 'चौदह भुवन एक पति होई।' 'मंगल भवन' का अर्थ चौदह भुवन। और वह सब मंगल। मंगल निद्रा; सोना यह भी मंगल है। हम प्रमादी न बने अत: कहा गया है -

जा, जा, निंद्रा, हुं तने वारुं, तुं छे नार धुतारी रे;

निद्रा को ठगिनी बताई है। उसके विरुद्ध बहुत आलोचना है। 'मंगल निद्रा मंगल सुप्ति मंगल जागृति एवम् च।' बिलकुल दो दिशा। मेरे भाई-बहन, मेरी मुख्य बात याद रखिए। व्यास भगवान ने जिसे मृत्यु मानी है ऐसे प्रमादरूपी मृत्यु का हम स्वयं वरण न कर ले। अत: संत कहते हैं, हे निद्रा, मैं तुझे टोकता हूं। तूने अच्छे काम नहीं किए हैं।

जोगी लूंट्या तें भोगी लूंट्या, लूंट्या तें दरबार रे ...

'मंगल निद्रा'; अब उसके प्रमाण। एक भाई ने लिखा, 'बापू! मैं कथा कर सकूं इतनी तो मेरी हैसियत नहीं पर मैं मेरे जैसे युवाओं को कथा में ले आने की कोशिश जरूर करूंगा।' स्वागत है, बाप! पर एक बिनती है। जबरदस्ती

सात श्लोकों में मंगलाचरण और फिर कहा, 'स्वान्त: सुखाय', मेरे अन्त:करण को सुख प्राप्त हो इसीलिए इस कथा को भाषाबद्ध करता हूं। फिर शोक को श्लोक में उतारने के लिए तुलसी ने पांच सोरठा में बिलकुल ग्राम्यगिरा में सीयाराम को स्थान दिया।

जो सुमिरत सिधिहोइ गन नायक करिबर बदन।
करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन।।
मूक होइ बाचाल पंगु चढ़इ गिरिबर गहन।
जासु कृपाँ सो दयाल द्रवउ सकल कलि मल दहन।।
बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररुप हरि।
महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर।।

सनातन धर्म के जगद्गुरु शंकराचार्य ने कहा है कि पांच देवों की शरण लेनी है। प्रथम गणेश, सूर्य, विष्णु, शिव और भगवती। गणेशपूजा माने विवेक रखना। हम विवेक रखें यही गणेशपूजा है। सूर्य को अर्घ्य देना उत्तम है। प्रकाश में रहना माने सूर्यपूजा। विष्णुपूजा माने दिल को विशाल रखे। भगवान शिव का अभिषेक माने दूसरों का कल्याण। यह हररोज का रुद्राभिषेक है।

निराकारमोंकार मूलंतुरीयं।
गिराग्यान गोतीतमीशं गिरीशं।।
करालं महाकाल कालं कृपालं।
गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।

शिव माने दूसरों का शुभ हो। महादेव कल्याणकारी है। जगदंबा माँ तो माँ है। जगदंबा भवानी माने श्रद्धा। भगवान करे अपनी श्रद्धा अटूट रहे। अखंड श्रद्धा का नाम पार्वती है। अपनी श्रद्धा बरकरार रहे। फिर सबकी वंदना करते तुलसी ने गुरुवंदना की है। गुरुपद की वंदना की है। असंग चरण का आश्रय किया है। गति का प्रतीक चरण है। जो सबके बीच होते हुए भी असंग है। दलपतसा'ब पढियार ने एक बार अस्मितापर्व में कहा था कि कलियुग है। गुरु कमजोर हो सकता है पर गुरुपद कमजोर नहीं होता। यह देश व्यक्तिपूजा से भी ज्यादा उसकी भूमिका को पूजता है; उसकी वैचारिक संपदा को पूजता है।

गुरु तारो पार न पायो,
हे न पायो, पृथ्वीना मालिक,
तमे रे तारो तो अमे तरीये रे.

तुलसी ने 'रामचरित मानस' के प्रथम प्रकरण में गुरु की पहचान दी है। बड़ौदा की चौपाई याद करूं तो -

करनधार सदगुर दृढ नावा।
दुर्लभ साज सुलभ करि पावा।।

गुरुवंदना की। गुरु की चरणधूलि से दृष्टि पवित्र की है। धूलि माने 'जाकी कृपा लवलेस।' धूलिकण माने गिनती का छोटे से छोटा नाप। उसकी कृपा का लघुतम कण हमारी आंखों में प्रकाश भर देता है। समस्त जगत वंदनीय है। सबको वंदना करते-करते हनुमानजी की वंदना की।

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।
प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर।।

'विनयपत्रिका' की कुछेक पंक्तियां -

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।
पवनतनय संतन-हितकारी।
हृदय बिराजत अवध-बिहारी।।

फिर आगे वंदना करते-करते गोस्वामीजी भगवान के नाम की वंदना और महिमा करते हैं। आज कथा को विराम। कल और गति करेंगे।

किसे भी मत लाइए। उचित समय पर हो। भीड़ नहीं चाहिए। जबरदस्ती हिंसामात्र है। इसमें प्रेम नहीं होता। इकबाल को किसी ने पूछा, 'अक्कल की इन्तिहा क्या है?' आदमी की बुद्धि की ऊंचाई, पूर्णता, श्रेष्ठता आप जो भी अर्थ करे। इकबाल ने अच्छा जवाब दिया, 'हैरत।' हैरत माने आश्चर्य। ज्यों-ज्यों बुद्धि में वृद्धि हो त्यों-त्यों नये रहस्य खोलने की इच्छा होती है, जिसे दर्शनशास्त्र, मनीषी, 'परम आश्चर्य' शब्द ब्रह्म से नवाजते हैं। दर्शनशास्त्री का शब्द है 'परम आश्चर्य।' हमारी दृष्टि छोटी पड़ जाए। बाप, बुद्धि में वृद्धि हो। यदि आश्चर्य में वृद्धि हो तो समझना, गति अच्छी है। बुद्धि में वृद्धि के बाद ऐसा लगे कि मेरी समझ में आ गया है तो वह समझना, हम बहुत निम्न है। बुद्धि बढ़ने पर भी परम आश्चर्य, जिज्ञासा; ब्रह्मसूत्र का शब्द कहूं तो, 'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा।' भक्तिसूत्र में कहूं तो 'अथातो भक्तिजिज्ञासा।' कर्मकांड के ग्रंथों में कहूं तो 'अथातो धर्मजिज्ञासा।' यह होना चाहिए। उपनिषद में तो कहते हैं, जो कहे मैंने जान लिया उसने कुछ भी नहीं जाना है। जो यह कहे मैंने कुछ भी नहीं जाना है, उसने सब कुछ जान लिया है। तो बाप, अक्कल की इम्तिहान हैरत है। परम आश्चर्य। प्रश्न आते ही रहते हैं। रहस्य जानना चाहिए। उन सदस्यों को जानने के लिए ही हम बुद्धपुरुष के पास बैठते हैं, तब बुद्धपुरुष की मानसिकता का नाप निकालने की कोशिश मत कीजिए। उसे पीने की मानसिकता रखिए। जीवन स्वयं एक बड़ा प्रश्नार्थ है। उसमें कहा है पूर्णविराम, कहां है इन्तिहा?

फिर इकबाल के पास दूसरा प्रश्न है कि 'हैरत की इन्तिहा क्या है?' तो कहते हैं, 'इश्क, प्रेम।' जगत में परम आश्चर्य का शिखर प्रेम है, प्रीत है, भाव है, महाभाव है। बाप, इश्क, प्रेम। इकबाल से तीसरा प्रश्न पूछा गया, 'इश्क की इन्तिहा क्या है?' कहा, 'इश्क की कोई इन्तिहा नहीं होती।' श्रावक ने फिर कहा, 'आपने तो अपने शे'र में कहा है कि, तेरे इश्क की इन्तिहा चाहता हूं। अब विरोधाभास बोल रहे हैं!' कहा, दूसरे मिसरा में भूल सुधर गई वो तो गौर कर -

तेरे ईश्क की इन्तिहा चाहता हूं।
मेरी सादगी देख क्या चाहता हूं।

इकबाल के साथ का यह संवाद है। वो कहे इसके आगे-पीछे कुछ नहीं। तुलसी थोड़े आगे निकले -

परम प्रेम पूरन दोउ भाई।

पूर्णता नहीं पर परमपूर्णता। जहां तक बुद्धि चलती है वहां तक अंतिम निर्णय नहीं हो पाता। जहां तक मन है वहां तक अंतिम निर्णय नहीं है। जब तक मन है तब तक आखिरी निर्णय नहीं। अहंकार हो तो हो ही नहीं सकता। एक ऐसा भी शिखर है जो हमें आगे ले जाय। क्यों? पंक्ति का उत्तरार्ध -

परम प्रेम पूरन दोउ भाई।
मन बुधि चित अहमिति बिसराई।

जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं, अमुक क्षेत्र तक आप सम्यक् तर्क कर सकते हैं, उसके बाद तर्क व्यर्थ हो जाता है। कारण 'मन बुद्धि चित अहमिति बिसराई।' तो बाप, उन्हें जबरदस्ती कथा में न लाए। उन्हें हैरत होने दीजिए। तू युवाओं को लाए यह यज्ञ में तेरी आहुति होगी। यह हम सबकी कथा है। किसी ने पूछा है, 'बापू, नर्क से डर नहीं लगता, लेकिन गुनाहों की गिनती रामनाम लेने की गिनती से ज्यादा हो तो?' यह श्वेत रण हमें जितना दीखे उसमें घास का ढेर लगा दो पर दिया सिलाई तो सिर्फ एक ही चाहिए! माचिस के कारखाने खड़े न करने पड़े! चौपाई याद करे -

बारक राम कहत जग जेऊ।
होत तरन तारन नर तेऊ।।
जासु नाम सुमिरत एक बारा।
उतरहिं नर भवसिंधु अपारा।।

अमुक वस्तु को छोटी न माने। एक माह का पुण्य किया हो और पांच मिनट दूसरों की निंदा करो तो वह अंगारा पुण्य जला डालता है। तो फिर रामनाम की शक्ति। सवाल भरोसे का है, बस। विधि की जरूरत नहीं है, विश्वास की जरूरत है। रामनाम जपता हृदय सबको पकड़ता है। सत्य में बहुत प्रगति करनी हो तो बाप, बहुत राम भजिए। प्रेम में बहुत गति करनी हो तो कृष्ण को भजिए। करुणा प्रवाह सागर की तरह बहाना हो तो महादेव को भजिए। यही मारग है।

मुंबई में 'मानस-मारग' कथा की तब एक युवक ने प्रश्न पूछा था कि ईश्वर के पास जाने के मारग तो बताए पर ईश्वर को अपने पास आना हो तो कौन-सा मारग है? तब कहा था, 'गिरि तरु नख आयुध।' प्रभु हमारे पास आए तो तीन मारग है। पर्वत माने स्थिरता, धैर्य, अखंड भरोसा। इस मार्ग से हरि हौले-हौले हमारे पास आते हैं। दूसरा मारग तरु-वृक्ष। इसका सबसे बड़ा लक्षण है परोपकार। प्रभु हमारे पास परोपकार से आता है। तीसरा नाखून माने सूक्ष्म तत्त्व। इसका वर्णन गोस्वामीजी ने किया है। नाखून को मर्यादा में रखिए। रावण की बहन की तरह बढ़ जाय तो नाक-कान कट जाय। शूर्पणखा के सूप जैसे नाखून थे। परंतु सूक्ष्म नाखून की महिमा है।

श्रीगुरु पद नख मनि गन जोती।

बुद्धपुरुष के पैर की नाखून ज्योति के प्रकाश से हरि अपने हृदय में आयेंगे। तुलसी कहते हैं, केवल दर्शन नहीं, स्पर्श नहीं, धोना नहीं; यद्यपि उसकी महिमा होगी, पूजा होगी, परंतु तुलसी तो सूक्ष्म की ओर ले जाते हैं -

सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती।

केवल स्मरण। नाखून ज्योति का स्मरण। इस तरह हरि

रात मंगल है, सुंदर है। रात की महिमा है। सच्चे अर्थों में रतजगा अद्भुत होता है। पर जबरदस्ती नहीं। 'मानस' के आधार पर किसीके जीवन का आंतरिक दर्शन करना हो तो रात में प्रवेश करना चाहिए। दिन में हम सभी सज्जन लगते हैं, साहब! किसी भी आश्रम का आदमी दिन में गृहस्थ और रात में संन्यासी होता है, वह परमहंस की ओर गति कर रहा है। दिन में गृहस्थ और रात में संन्यासी। अपनी कैसी स्थिति है? हम दिन में त्यागी और रात में भोगी! दिन में कुछ अलग, रात में कुछ अलग होते हैं! ऐसे समय में रात घातक बने; बाकी रात मंगल है। हमें विश्राम देती है। रात बड़ी वरदायिनी है। साहब, भजनानंदी के लिए तो रात जैसा कोई बड़ा मुहूर्त नहीं है।

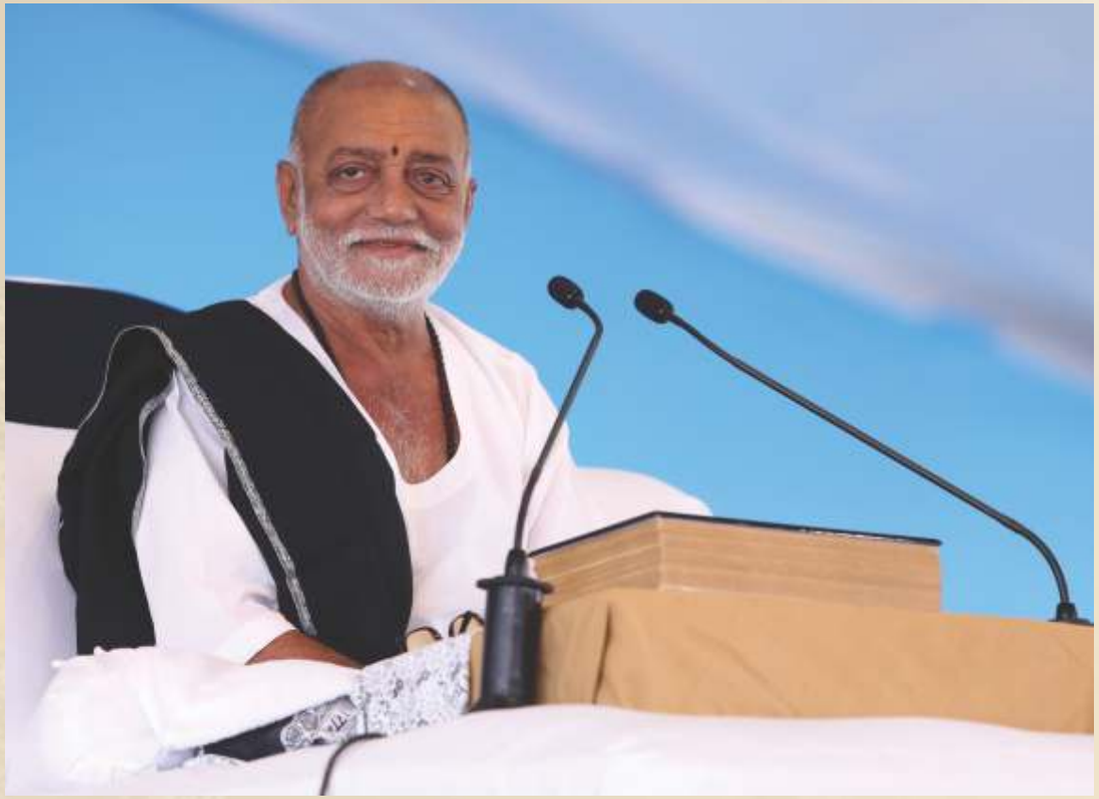

आते हैं। बाप, कई छोटी-छोटी वस्तु पर परिणाम बड़ा, इसीलिए सावधान!

जा, जा, निंद्रा हुं तने वारुं, तुं छो नार धुतारी रे;
निंद्रा कहे छे हुं नथी धुतारी, हुं छुं चंचळ नारी रे;
पशु-पंखीने सुखडां आपुं, दु:खडां मेलुं विसारी रे ...

व्यास ने प्रमाद को मृत्यु कहा है। प्रमादरूपी मृत्यु का हम सामने से वरण न करे इसीलिए संतों ने विधविध विद्याओं से हमें निद्रा का दर्शन कराया है। पर यह तो मंगलभवन है।

'मंगलं निद्रा, मंगलं सुप्ति, मंगलं जागृति एवं च।' शंकराचार्य ने प्रमाण प्रस्तुत कर निद्रा को मंगल कहा है।

आत्मा त्वं गिरिजामति सहचरा प्राणाशरीरं गृहं
पूजा ते विषयोपभोग रचना निद्रा समाधि स्थिति।

जगद्गुरु कहते हैं, मैं निंदा को समाधि मानता हूं। वैष्णवी परंपरा है कि जागरण करके भी कीर्तन कीजिए। अच्छा है; हरि जागरण, कीर्तन अच्छी बात है। महामुनि विनोबाजी कहते हैं कि प्रगाढ निद्रा हरिस्मरण है। सुंदर निद्रा आ जाय यह आपका हरिस्मरण है। नाटकीय निद्रा या नाटकीय जागृति नहीं पर सहज हो, तो निद्रा मंगल है। पर अमंगल क्या है? निंदा अमंगल है, निद्रा मंगल है।

हमारी आध्यात्मिक यात्रा क्यों सफल नहीं होती? कल तीन फूंक की बात हुई। चौथी फूंक कृष्ण ने

गोपियों को निमंत्रित करने जो फूंक मारी थी वह चौथी फूंक। कृष्ण की फूंक। जिसे चाय पीने की आदत हो वह गरम-गरम चाय में लगाई फूंक! साहब, अभी एक फूंक और। हमारी माताएं चूल्हे में फूंकनी लेकर फूंक लगाए और रोटी बनाए। एक ऐसी फूंक कि अपना चैतन्य जाग्रत हो जाय; अपनी ज्ञानाग्नि प्रज्वलित हो जाय; अपनी कुंडलिनी जाग्रत हो जाय। ऐसी एक फूंक रसोई बनानेवाली की और थाली-कटोरी में कहीं-कहीं धूल जमी हो और फूंक लगाए। तो बाप, यह हुई निंदा और निद्रा की बात। निंदा मत कीजिए।

उदासीन नित रहिअ गोसाईं।
खल परिहरिअ स्वान की नाईं।।

क्यों अपनी अध्यात्म गति पूर्णता प्राप्त नहीं करती? परिणाम में दो और दो चार होने चाहिए। पर क्यों नहीं होता? ऐसी जागृति की बात छोडिए, जो जागृति हमें निंदा करने के लिए प्रेरित करे, व्यर्थ है। निंदा नर्क है। 'मंगलम् सुप्ति', सुप्ति माने सुषुप्ति! सुषुप्ति अवस्था मंगल है। सुषुप्ति योग की प्रक्रिया है। मंगल ही होती है। इसके सामने अमंगल क्या है? सुषुप्ति मंगल पर बेवजह सुस्ती अमंगल है। मुझसे कुछ नहीं होता! साधु-संत ही हरि को भज सकते हैं! व्यर्थ ही पड़े रहे? सुस्ती अमंगल है। जागृति मंगल है। परंतु जाग्रत अवस्था में असावधानी अमंगल है। जागना तो नरसिंह की तरह -

जागीने जोउं तो जगत दीसे नहीं.
ऊंघमां अटपटा भोग भासे.

यह सब निराला लगता है। तुलसी कहते हैं -

जानिअ तजहिं जीव जग जागा।
जब सब बिषय बिलास बिरागा।

तो बाप, कभी-कभी 'मैं जाग्रत हूं', इसमें असावधानी आती है। फिर असावधानी को हम ज्यों-त्यों साबित करने का मूढतापूर्वक प्रयत्न करते हैं! जाग्रत वही है जो विद्युत की झिलमिल में मोती पिरो ले। क्योंकि अचानक अंधकार आयेगा। बशीर बद्र कहते हैं -

बहुत देर तक रात ही रात होगी।
मुसाफ़िर है हम भी मुसाफ़िर हो तुम भी।

तुलसीदास कहते हैं, मेरे गुरु ने कई बार कथा सुनाई। पर मैं जगा हुआ नहीं था और जब जगा तब -

तदपि कही गुर बारहिं बारा।
समुझि परी कछु मति अनुसारा।।
भाषाबद्ध करबि मैं सोई।
मोरें मन प्रबोध जेहिं होई।।

तो बाप, जागृति मंगल है। सावधानी रखनी है कहीं चूक न हो जाय। शास्त्रकार कहते हैं, रात-दिन दोनों मंगल है। भले कहा गया हो -

मोह निसाँ सबु सोवनिहारा।
देखिअ सपन अनेक प्रकारा।।
एहिं जग जामिनि जागहिं जोगी।
परमारथी प्रपंच बियोगी।।

रात मंगल और सुंदर है। रात की महिमा है। सच्चे अर्थों में रतजगा अद्भुत है। पर जबरदस्ती नहीं। 'मानस' के आधार पर किसी के जीवन में आंतरिक दर्शन करना हो तो रात्रि प्रवेश करना चाहिए। दिन में तो हम सज्जन लगते हैं। साहब, किसी भी आश्रम का आदमी दिन में गृहस्थ और रात में संन्यासी हो माने परमहंस की ओर गति कर रहा है। दिन में गृहस्थ रात में संन्यासी। हमारी स्थिति क्या है? हम दिन में त्यागी, रात में भोगी! दिन में कुछ ओर, रात में कुछ ओर! ऐसी स्थिति में रात घातक हो सकती है। बाकी रात मंगल है। रात हमें विश्राम देती है। रात बड़ी वरदायिनी है। यह सापेक्ष है। इसे अलग नहीं कर सकते। भजनानंदी के लिए तो रात सहज और सुंदर है। साहब, रात सुंदर है। श्री हनुमानजी ने रात में लंका

प्रवेश किया था। किसी के जीवन का सूक्ष्मदर्शन करना हो तो हमें सूक्ष्म होना पड़े। दरवाजें में प्रवेश करना हो तो दरवाजे से बड़े नहीं होना चाहिए। नहीं तो प्रवेश न हो।

मसक समान रूप कपि धरी।
लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी।।

और कौन-सा समय पसंद किया? 'निसि नगर करौं पइसार।' रावण और विभीषण को खोजने हो तो हमें रात के समय लंका जाना पड़ेगा। मामला अंधकार का है। दलपत पढियारसाहब लिखते हैं -

कोई रे उतारो मारो अंचळो,
ढांकेली माटीनां बीज बधां बावरां,
अेनां मूळ रे भीतर मोजां बहार रे,
नित रे सजुं ने नित नित संचरुं,
अमने आघे वागे अमारा भणकार रे,
कोई रे उतारो मारो अंचळो.

साहब, हमें हमारा अंधकार विघ्नकारी है। साहब, मेरा ओढने का वस्त्र उतारिए। बिन गुरु वह कौन उतारे? वह कफन पहना भी दे और निकाल भी दे। माने मृत्यु पर विजय दिलाए। यह ओढने के वस्त्र को भेदने की बात है। सहज रूप से जिस-जिस ने जगत को दिया है वे सब जाग्रतपुरुष है, जिन्हें मैं बुद्धपुरुष कहता हूं। कबीरसा'ब कहते हैं -

सुखीया सब संसार है, पावे अरु सोवे।
दुखिया दास कबीर है, जागे और रोवे।

तो बाप, रात-दिन दोनों मंगल है। नरसिंह को याद करें -

धन्य आजनी घडी रळियामणी...
मारो व्हालोजी आव्यानी वधामणी हो जी...

'मंगलयतनो प्रभु:', प्रभु कौन? राम; प्रमु कौन? शिव; प्रभु कौन? कृष्ण; जो सब कुछ करने के लिए समर्थ हो वही। वही नाम प्रभु है। समस्त जगत मंगल है -

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।

तो, परमात्मा स्वयं मंगलभवन। प्रभु का नाम मंगल भवन जिसके अंदर नामरूप लीलाधाम समाहित है। ऐसा तुलसीशास्त्र 'मानस' भी मंगलभवन है। नीतिनभाई की एक कविता है -

रूडी रामकथा छे रणमां.
भीनपवरणुं झरणुं वहेशे रेतीना कणकणमां.
चोपायुंनां चंदनथी श्वासो थाशे मघमघता.
दोहाना दीवाथी जीवतर थइ जाशे झगमगतां.
कोई अगोचर वादळ वरसे आवीने आंगणमां.
रूडी रामकथा छे रणमां.

रामकथा के क्रम में श्री हनुमानजी की वंदना के बाद सीताराम की वंदना, फिर रामनाम की महिमा और वंदना, तुलसी ने पूर्णांक में की है। नाम की महिमा बहुत गई। रूप तो आंखों से देखे। और देखने के बाद भी अर्जुन को बुखार चढा है! वह रूप को पचा नहीं पाया है। नाम की महिमा है अत: तुलसी लिखते हैं -

बंदउँ नाम राम रघुबर को।
हेतु कृसानु भानु हिमकर को।।
महिमा जासु जान गनराऊ।
प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ।।

यह हरिनाम कलियुग का प्रधान साधन है। हम जैसे जीवों के लिए तो यही है।

रामहि सुमरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।।

तुलसी नाम की वंदना करते हैं। गणपति के नाम लिखकर परकम्मा की तो वे दुनिया में सर्वप्रथम पूजनीय बने। आदिकवि वाल्मीकि उल्टा बोले और शुद्ध बने।

राम की कथा सुखभवन है

'मानस-मंगलभवन' कथा का केन्द्रीय विचार; इस संदर्भ में काफी जिज्ञासा आई है। 'बापू, आपने कल ऐसा कहा था कि मैं किसी को बांधता नहीं हूं, न तो किसी से बंधता हूं। पर १९७४ में कापरी में कथा हुई थी तब से आपकी व्यासपीठ से बंधे हैं तो क्या हम आपसे बंधे नहीं है?' व्यासपीठ से जुड़े हैं। आपका प्रश्न अच्छा है। जवाब भी अच्छा है। व्यक्ति से नहीं, व्यासपीठ से बंधना है। व्यक्ति आज है, कल नहीं। व्यासपीठ शाश्वत है; हरिकथा शाश्वत है। 'हरि अनंत हरि कथा अनंता।' जो व्यासपीठ से बंधे हैं, उनका स्वागत करता हूं। मैं भी व्यासपीठ से बंधा हूं। यह भी इतना ही सत्य है। व्यासपीठ से बंधे रहेंगे तो वह मुक्त करेगी।

यह गुन साधन तें नहिं होई।
तुम्हरी कृपाँ पाव कोई।।

इस चौपाई से मैं बंधा हूं। अमुक वस्तु साधनसाध्य नहीं, कृपासाध्य है। अपनी मानसिक और शारीरिक क्रिया इन सबकी मर्यादा है। हम कितना कर सके? अपनी औकात कितनी? अत: कुछेक वस्तु कृपासाध्य है। उसकी कृपा हो तो ही कर सके। उसकी कृपा हो रही है। पर हम उसे बराबर ग्रहण नहीं कर पाते। उसका एक ही कारण तुलसीदासजी ने बताया है कि हम होशियारी-चतुराई नहीं छोड़ते। चतुराई माने कपटपूर्ण होशियारी! हम भीतर पूछे कि हम कितनी चतुराई करते हैं! हम प्रणाम भी करते हैं और फिर मजाक भी उडाते हैं! तब चतुराई उतरती हुई कृपा को पहुंचने नहीं देती। 'मानस' का सूत्र है -

मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई।
भजत कृपा करिहहिं रघुराई।

जो आदमी चतुराई छोड़ हरि को भजे वही कृपा का अनुभव कर सकेगा। फिर अनुभव की हुई कृपा से यह साध्य होगा।

यह गुन साधन तें नहिं होई।

यह गुण साधना नहीं हो सकती। कृपा चाहिए। मूढतामय अहंकार है, यह सावधान होने नहीं देता। चतुराई क्यों?

युवा भाईयों और बहनों, मेरी आप से प्रार्थना है, एक बार 'महाभारत' पढ़िए। जब भी आपको समय मिले तब। 'याज्ञसेनी' आसामी भाषा में है। 'मृत्युंजय' कर्ण पर लिखा गया; सावंतसाहब ने लिखा, महाराष्ट्र का लेखक; मूल पात्रों को रखकर वे आज के संदर्भ में है। सबको अपना कर्ण होता है। सबका अपना कृष्ण होता है। यह अपना अधिकार है। मेरे पास अपना राम है, अपना हनुमान है।

युवा भाईयों और बहनों, इन ग्रन्थों को एक बार देखिए। फिर आपको जिस पर बिना हेतु हेत हो उनके चरण में बैठकर सुनिए। फिर आप रहस्यों को अधिक समझ पायेंगे। तब ज्यादा अद्‌भुत लगेगा। और एक वस्तु तय है कि अपना यह पंचभौतिक शरीर स्वयं एक ग्रन्थ है; उसे हम सद्‌ग्रन्थ नहीं कर सके इसकी पीड़ा होनी चाहिए। यह हिलता-डुलता ग्रन्थ है। जिसने 'मानस' ग्रन्थ को नहीं पढ़ा उनके पढ़े हुए ग्रन्थों ने गांठ बांध दी है, ग्रन्थियां खड़ी की है। जैन धर्म में महावीर स्वामी के अमुक नाम है। उसमें एक नाम निर्ग्रन्थ है। महावीर माने एक व्यक्ति का परिचय नहीं है। ऐसी एक चेतना का परिचय है जो कहीं भी किसी गांठ से बंधा नहीं है। जिसकी ग्रन्थियां छूट गई वे वीर नहीं, महावीर है। जिसकी ग्रन्थि छूट गई है, जो निर्ग्रन्थ है। अपने आग्रह अनुसार ग्रन्थों ने ग्रन्थि पैदा की है।

मुझसे किसी ने पूछा, 'बापू, एक राज़ बताइए। आप व्यासपीठ पर आने के बाद यह जो रामनामी है उसे आप पोथी के अंदर एक चौथाई डालते हैं फिर पोथी रखते हैं। कथाकार जगत की अफवा है कि बापू की रामनामी पुस्तक का स्पर्श करती है तो कनेक्शन है! फिर रामनामी का स्पर्श करे तो करंट आए फिर वह करंट दिल में जाय, पूरे शरीर को लगे, फिर हमें लगे!' यह लीजिए! छोड़ दिया। करन्ट नहीं चाहिए। अरे, चैन से जीओ। पर लोग ऐसा ही चाहते हैं! यह सब रहने दीजिए। 'उत्तमा सहजावस्था, मध्यमा ध्यानधारणा।' तुलसी तो कहते हैं -

पराधीन सपनेहु सुख नाही।

पराधीन को सपने में भी सुख नहीं मिलता। मैं स्वतंत्र हूं। आदमी स्वतंत्र होना चाहिए। अध्यात्म ऐसा कहता है, 'छाप तिलक सब छीनी।' रमेश पारेख ने लिखा है कि -

पांचीकाना होय, होय नहीं कदी संतना ढगला.
संत सहुने मुक्ति वहेंचे, नहीं वाघा, नहीं डगला.

आप देखिए, इस आदमी ने हद कर दी है कि झुंड को कैसे पांचीका कह दिया! उछालिए वैसा उछले। 'आप यों बोलना सभा में।' तो ऐसा बोले, उसे पांचीका कहते हैं। आप हमारे लिए ऐसा कहना कि देखिए इसमें तो इतना दान दिया! यों कहना ये पांचीका है। अभी बड़ौदा में मैं सितांशुसाहब को मिलने गया। साहब बहुत प्रसन्न हुए। साहब ने कहा, बापू, सबको अपनी-अपनी जीवनशैली है। मैंने कुछ अपनी रीति निश्चित की है कि मुझे कुंआ खोदना है। आपका और मेरा मार्ग अलग पर मन एक है। क्योंकि आप विशाल गगन में उड़ान भरते हैं। मैं कुंआ खोदना बंद करूं और आपके साथ चलूं तो पतला हो

जाऊं! अत: मैं यह करूं, आप वो कीजिए। सभी की जीवन शैली अपनी-अपनी है। ऐसे विचार आदरणीय और प्रणम्य है। जब तक मानव दूर रहता है तब तक ग्रन्थियां है। निकटता आने पर ग्रन्थियां पिघल जाती है। किसी भी आदमी के लिए शीघ्र अभिप्राय नहीं देना चाहिए। गलत होगा। उन्होंने मुझे एक कविता सुनाई कि सरस्वती मयूरवाहिनी है। सितांशुसा'ब ने कहा, सरस्वती, तू मयूर छोड़ दे। सरस्वती, तू जीवनभर मयूर पर बैठी, मयूर की तरह नर्तन करती रही। सरस्वती, अब तू सिंहवाहिनी बन। यह तो ज्यों उछले त्यों पांचीका की तरह उछलना! कविता का मर्म तो वही पाए। रमेश पारेख कहते हैं -

अहीं पयगम्बरनी जीभ जुओ वेचाय छे बब्बे पैसामां.
ने लोको बब्बे पैसानी औकात लईने आव्या छे.

ऐसे समय रमेश पारेख ज्यादा सच्चे लगते हैं। 'होय नहीं कदी संतना ढगला!' चेतना और बुद्धपुरुष को ध्यान में रखकर लिखा है। साहब, जीवन का आनंद लेना हो तो हमें अपने ढंग से जीना चाहिए। मुझे एक आदमी ने कहा, आप माईक को जरा दूर रखिए। टी.वी. में तो आप बीड़ी पीते हो ऐसा लगता है! हद हो गई! बचपन में एक बार सादी छोटी बीड़ी पी थी। जिज्ञासा थी। टिकिट न ली हो तभी चेकींग हो! कोई देखे नहीं ऐसी जगह बीड़ी लेकर गया। चारों ओर देख लिया! मेचबोक्स निकाली।

चरागों के बदले मकां जल रहे हैं।
नया है जमाना नई रोशनी है।
न हारे हैं इश्क न दुनिया थकी है,
दीया जल रहा है, हवा चल रही है।

दुनिया में निंदा की हवा चल रही है और साधु का भजन, उसका भी दिया जल रहा है। जब मुझे लगा कि कोई देख नहीं रहा है भगवान के सिवा और दूसरा। दियासलाई ने लाज रखी। जानता नहीं था तो मुंह में घूंट ली! बीड़ी की भी एक फूंक होती है। बीड़ी जली। धुंआ निकालने की कोशिश की। उसी समय हमारे गांव की एक बहन बावरी चरवाहा, पडोसिन थी; वह पास आई, कहने लगी, 'बीड़ी! अभी जाकर बापू को बताती हूं।' मैंने कहा, मर गए! हालां कि उसने नहीं बताया। प्रभुदासबापू से मैंने कहा, यों मुझसे बीड़ी पी गई! जवाब दिया, 'कोई बात नहीं, जाओ।' एक बार तंबाकूवाला पान खाया था। फिर चक्कर आये! पूरा तलगाजरडा घूम रहा था!

'रामायण' के मंगलभवन की चर्चा चल रही है। पूरे 'रामचरित मानस' में १०८ बार एक मंगलमाला है। गलती हो तो माफ पर उसमें 'मंगलभवन' सहित 'मंगल' शब्द का कुल योग १०८ होता है सो ध्यान खींचता है। पूरी माला १०८ मनके की है। 'मनके' शब्द के पीछे हमारे जीवन का विकास और अंदर का विश्राम बढ़े ऐसे संकेत व्यासपीठ अनुभव कर रही है।

एक प्रश्न है, 'बापू, ईश्वर जगत में बसता है। क्या विज्ञान उसे परिभाषित कर सके?' हां, कर सके। विज्ञान ऐसा कबूल करता है कि जगत है। पृथ्वी, आकाश है, ऐसा विज्ञान कबूल करता है। यह सवाल ही नहीं है। मैं इतना ही कहता हूं कि विज्ञान यह जगत है, ऐसा सिद्ध करने की कोशिश करता है, तो जगत ही जगदीश है। ईश्वर को आप अलग क्यों करते हैं? यह अस्तित्व ही परमात्मा है। गुजराती में प्रार्थना है -

मंदिर तारुं विश्व रूपाळुं, सुंदर सर्जनहारा रे,
पळ पळ तारां दर्शन थाये देखे देखनहारा रे.

जगत ही परमात्मा है। तुलसी लिखते हैं -

सबहि सुलभ सब दिन सब देसा।
सेवत सादर समन कलेसा।।

सीय राममय सब जग जानी।

करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी।।

और बाप, सभी वस्तु केवल बुद्धि से निर्णित नहीं होती। बुद्धि नहीं चलेगी। मायाभाई से सुना कि आलाराम बुद्धि से बना सकते हैं, पर जलाराम बुद्धि से नहीं बनते। यह वीरपुर में प्रकट होते हैं। अन्नक्षेत्र शुरू करना। दूसरा दकम मा को सौंपा। तीसरा, मंदिर से किसी भी प्रकार की भेंट का स्वीकार न करना। ये विराट के तीन चरण है। टायर में पंक्चर हो तो हवा भरने मशीन के पास जाना पड़े। यों हरि सर्वत्र है। फिर भी हमें मंदिर में किसी मूर्ति के पास आना पड़े, श्रद्धास्वरूप। तुलसी कहते हैं -

हरि व्यापक सर्वत्र समाना।

प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना।।

तो, 'रामचरित मानस' में १०८ बार 'मंगल' शब्द प्रयुक्त हुआ है। माने 'रामचरित मानस' १०८ 'मंगल' शब्द का भवन है। १०८ प्रकार के मंगल निवास करते हैं। उसमें खास भवन भी है। अयोध्या का प्रसिद्ध कनक भवन। पर अपने जीवन के लिए बहुत जरूरी भवन तुलसी ने 'मानस' में खड़ा किया है, वह कोपभवन है। चार वस्तु से कोपभवन बनता है। नींव, दीवारें, छत और दरवाजा। चार सूत्र ऐसे हैं, जो हमारे जीवन में समझ में आए तो कोपभवन के बदले मंगलभवन या कनकभवन बने।

रामके राज्याभिषेक का निर्णय ले लिया गया। मंथरा ने सुना और गंदे श्वासोच्छवास लेती कैकेयी भवन जाती है। अब होंशियारी और चतुराई के आने से कोपभवन की नींव डाली जाती है। इससे मंथरा का क्या दोष? देवताओं ने सरस्वती को बुद्धिभ्रष्ट करने कहा। बुद्धि की प्रेरणा शिव देते हैं। यह कैसे हुआ ऐसा विचारने से हम बच सकते हैं। दशरथ ने पूछा कि 'महारानी कहां है?' उत्तर मिला, 'हम तो दासी है। हमारे साथ क्यों रोष करती है? कुछ बुरा लगा है। कोपभवन में सोई है।' 'कोपभवन' शब्द सुनते ही दशरथ ने संकोच का अनुभव किया। डर गए, आगे न बढ़ पाए। कैकेयी से लगाव। कैकेयी में आसक्ति ज्यादा है अत: कांप उठते हैं। यह तुलसी को अच्छा नहीं लगा है।

कोपभवन की नींव चतुराई है। दूसरी नींव मन की कुटिलता है। जिससे कोपभवन मजबूत बनता है। तुलसीदास ने अपने मन को ही कथा सुनाने का निर्णय किया। क्योंकि मन बहुत कुटिल है। हमें अपना मन कुटिल नहीं लगता। पर मन कुटिल, शठ और लुच्चा है।

राम भज मन सठ मना।

बुद्धि से तर्क-वितर्क कर, दुष्ट तर्क कर अकारण दुष्ट तर्क के जाल रचकर कैकेयी कोपभवन विकसित करती है। मंथरा के कारण कैकेयी के चित्त में पागलपन ऊतरा है। कोपभवन का शिखर छत है मानव का भयानक अहंकार। उसे ही सच लगे। दूसरों की बात माने ही नहीं। यह भयानक के अहंकार है। रजनीशजी का वाक्य है कि अहंकार गलत केन्द्र खड़ा करता है। मानवजीवन में एक गलत केन्द्र का सर्जन करता है।

अपने गुरुकुल में हनुमानजयंती के अवसर पर 'अस्मिता पर्व' का आयोजन होता है। अस्मिता का अर्थ भी अहंकार ही होता है। अस्मिता मीन्स अभिमान। अस्मिता पांच क्लेश में होती है। फिर भी 'अस्मिता' ऋषि के शास्त्र में प्रयुक्त हुआ शब्दब्रह्म है। क्योंकि जिन्हें हम अहंकार कहते हैं वह अहंकार मलिनता से, तमस से भरा हुआ गलत केन्द्र है। अस्मिता भावपूर्ण है। अहंकार में भी आदमी 'मैं हूं' ऐसा कहता है। अस्मिता में भी कहता है, 'मैं हूं। चिन्ता करना नहीं।' अस्मिता इतना सुंदर बन जाता है। अस्मिता में नमी होती है, अहंकार सूखा होता है। नमी होने के कारण अस्मिता प्रज्वलित-फलित होती है। उसमें से कुछ उगता है, अहंकार में नहीं। नरसिंह महेता कहते हैं -

'हुं करुं, हुं करुं' अे ज अज्ञानता,

शकटनो भार ज्यम श्वान ताणे;

सृष्टि-मंडाण छे सर्व एणी पेरे,

जोगी-जोगेश्वरा कोईक जाणे.

'भगवद्गीता' में स्पष्ट कहा है। योगेश्वर कृष्ण के शब्द है; त्रिभुवन में उसे कोई मिथ्या नहीं कर सकता। शाश्वत सत्य है। इसका मन्त्र कभी व्यर्थ नहीं जाता।

यस्य नाहं कृतोभाव बुद्धिर्यस्य लिप्यते।

जिस आदमी को 'मैं करता हूं', ऐसा भाव कभी न हो और जब उसकी बुद्धि फल में लिप्त न होती हो, ऐसा आदमी किसी की हत्या करेगा तो भी वह बंधन में नहीं बंधेगा क्योंकि उसके पीछे 'हुं पद' का भाव नहीं है। इसके पीछे उसकी बुद्धि में कोई लालसा नहीं। बाप, अहंकार ने अपने ज्ञान को खंडित कर डाला; भक्ति दूषित की। अहंकार कर्म के साथ मिश्रित हुआ और कर्म फल को विपरीत कर डाला। अहंकार करने जैसी अस्मिता होनी चाहिए। 'रामायण' में अभिमान की छूट भी देते हैं। अभिमान होना चाहिए, अहंकार नहीं।

अस अभिमान जाइ जनि भोरे।

मैं सेवक रघुपति पति मोरे।।

प्रभु, मेरा अभिमान बना रहे, ऐसा आशिष दीजिए कि मैं प्रभु का सदैव बना रहूं। प्रभु मेरे परमात्मा हैं। मैं सेवक हूं, वे मेरे पति हैं। अहंकार काफी खतरनाक वस्तु है।

तो, कोपभवन होशियारीपूर्ण चतुराई से तैयार होता है। मन की कुटिलता से तैयार होता है। दुष्ट तर्कों द्वारा कोपभवन निर्मित होता है। अपने चित्त को बावरा बना दे, विकृत कर दे तब कोपभवन का निर्माण होता

है। और आखिर में जब अहंकार भरजवानी में होता है तब मानव के मंदिर जैसे मकान में भी कोपभवन प्रकट होता है। तब मंगलभवन एक ओर रह जाता है।

सुख भवन संसय समन दवन बिषाद रघुपति गुन गना।
तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना।।
निज भवन गवनेउ सिंधु श्रीरघुपतिहि यह मत भायऊ।
यह चरित कलि मलहर जथामति दास तुलसी गायऊ।।

प्रभु की कथा सुखभवन है। उसका अर्थ यह है कि वहां सुख रहता होगा। भवन में सब वस्तुएं सुखद होगी। 'रामायण' सुखभवन है। गुजराती में कहावत है, 'पहेलुं सुख ते जाते नर्या।' प्रथम जरूरत कि आदमी तंदुरस्त होना चाहिए। मेरा तो अनुभव है, इस घर में ('रामायण' में) तंदुरस्त रहता हूं। कुछ नहीं होता। जिसमें गुनगन संग्रहित है। ऐसा ग्रंथ राम की कथा सुखभवन है। सभी अपने-अपने ढंग से सुख की व्याख्या करते हैं। शरीर की तंदुरस्ती बड़ा सुख है। भरोसा होगा तो चौपाई जैसी कोई औषधि नहीं है। यह तंदुरस्त रखती है। योग की महिमा अद्‌भुत है। अच्छी नींद के लिए खूब काम कीजिए। विनोबाजी ऐसा मानते थे। गहरी सांस लीजिए। काम का संतोष होगा, तो अच्छी नींद आयेगी। विनोबाजी कहते थे, भोजन के बाद तुरंत नहीं सोना चाहिए। भोजन के बाद पाचन क्रिया शुरू होती है। वह क्रिया चालू रहेगी तब तक आपको नींद नहीं आयेगी। यह सब विनोबाजी ने बताया है। उन्होंने निद्रा के लिए वेद में से तीन शब्द उतारे हैं। एक तो निद्रा; गुजराती में अपभ्रंश 'नींदर' हुआ। दूसरा वेद में शब्द है 'शयनम्'; हिंदी में हुआ 'सोना'; तीसरा शब्द है 'स्वाय'; स्वयं में विलीन हो जाना। योग निद्रा या प्रौढ़ निद्रा है। महापुरुष हमें तैयार दे देते हैं।

आवश्यकता से अधिक रूपये सुख है, अत्यंत संग्रह यह दु:ख है। 'रामायण' ने सिखाया कि दशरथ के आंगन में राम के ब्याह के बाद सीता, ऊर्मिला, मांडवी और श्रुतकीर्ति के आने के बाद सुख-साधन बढ़ गए। तो सुख के दिन काट दिए और दु:ख का बनवास शुरू हो गया। 'रामायण' सीख देती है, सुख का अतिरेक दु:ख है। 'सम्यक् सुख', बुद्ध का शब्द है। चाणक्य को पूछे तो सुभार्या सुख है। प्रियवादिनी स्त्री सुख है। अच्छी संतान सुख है।

चाणक्य नीति में लिखा है, पैर से अग्नि का स्पर्श मत कीजिए। अग्नि सृष्टि का प्रथम देव है। ऋग्वेद में प्रथम मंत्र ही अग्नि से शुरू होता है। अपना शिक्षक, गुरु, बुद्ध श्रेष्ठ-ज्येष्ठ उन्हें पैर मत लगाइए पर पैर पड़िए। तीसरा गाय को पैर मत लगाइए। चाणक्य कहते हैं, किसी वृद्ध को पैर मत लगाइए। कुंआरी कन्या से चरण स्पर्श न करवाइए क्योंकि वह जगदंबा है, कुंआरी है, दुर्गा है। 'भगवद्‌गीता' कहती है, पुत्री में सात वस्तु समाई हुई है। छोटे बालक को पैर मत लगाइए। संगीत के सभी वाद्य हार्मोनियम, तबला, सारंगी, सितार को पैर मत लगाइए। यह सरस्वती का अपमान है।

मानव के पास अपनी अस्मिता, सर्जन, विद्या और तृप्ति होनी चाहिए। लाओत्सु कहते हैं, जगत एक पवित्र पात्र है। उसमें डालने के लिए आपके पास कुछ होना चाहिए। अपने पूर्वजों का एक सुख होता है। मेरे माँ-बाप-दादा कैसे थे यह सोचना भी एक सुख है। राम भजने का भी सुख होता है। हनुमानचालीसा में लिखा है -

सब सुख लहैं तुम्हारी सरना,
तुम रक्षक काहू को डरना।

शिवजी सत्ताशी हजार वर्ष की समाधि से जगे और सती शिव की शरण में आए। सती ने प्रणाम किए। शिवजी ने सन्मुख आसन दिया। जीव जब सन्मुख होता है तब कोटि क्लेश नष्ट होते हैं।

जेनी सुरता शामळियाने साथ वदे वेद वाणी रे.
हरिने भजता हजी कोईनी लाज जतां नथी जाणी रे.

शिवजी रसप्रद कथा सती को सुनाते हैं। सती के पिता दक्ष ने यज्ञ का आयोजन किया उसमें सभी देवताओं को आमंत्रण दिया। दक्ष ने विष्णु को, ब्रह्म को भी आमंत्रण नहीं दिया!। सभी देवता अपने-अपने वायुयान में बैठकर कैलास पर से गुजर रहे हैं। सती का ध्यान वायुयान पर जाता है। शिव को पूछती है, 'प्रभु, ये सभी देवता कहां जा रहे हैं?' 'आपके पिता उत्सव कर रहे हैं। मेरे साथ मनदु:ख के कारण आपको भी निमंत्रण नहीं दिया है।' सती ने प्रस्ताव रखा, 'मेरे पिता के यहां प्रसंग है, आप आज्ञा दे तो मैं जाऊं।' समझाने पर भी सती न मानी। फिर शिवजी ने जाने की अनुमति दी। सती पिता के घर पहुंची। दक्ष के डर के कारण किसी ने भी सती से बात नहीं की। सती दु:खी हुई। सती यज्ञमंडप पहुंची। सती ने चारों ओर दृष्टि की। कहीं पर भी ब्रह्मा, विष्णु, शंकर का स्थापन नहीं था। त्रिभुवन गुरु का अपमान सहन न होने से सभा को उग्र संबोधन करते सती ने योगाग्नि में देह को प्रज्वलित कर भस्म कर दिया! यज्ञ में हाहाकार हो गया! दक्ष की दुर्गति हुई। यज्ञ निष्फल हुआ। सती का दूसरा जन्म हिमालय के यहां शैलराज के घर शैलजा के रूप में हुआ। पार्वती के रूप में जगदंबा जन्मी है। बूढ़ापे में श्रद्धा जन्म ले तो जीवन धन्य हो जाय। पुत्री जन्म से समृद्धि प्राप्त होने लगी। महात्मा और देवर्षि नारद आए हैं। देवर्षि ने पुत्री का नामकरण किया है, 'उमा', 'अंबिका', 'पार्वती' अनेक नाम से पूजा होगी। मंदिर बनेंगे। यह पुत्री माता-पिता को यश-प्रतिष्ठा दिलवायगी।' फिर पार्वती ने तप किया। तप सफल हुआ। आकाशवाणी ने वरदान दिया, 'तुझे शंकर मिलेंगे।'

पार्वती के वियोग में शंकर समाधिस्थ हुए। भगवान प्रकट हुए। कहा, अब आप ब्याह कीजिए। शिवजी ने अनुमति दी। ताडकासुर राक्षस समाज को दु:खी करने लगा। ब्रह्मा ने कहा, 'शंकर ब्याह करे और उनके यहां पुत्रजन्म हो तो ताडकासुर की मृत्यु संभव है।' कामदेव समाधि तोड़ने गए। वह जलकर भस्म हुआ। कामदेव को मन में स्थापित किया। महादेव का ब्याह कल देखेंगे। आज कथा को विराम।

अमुक वस्तु साधनसाध्य नहीं, कृपासाध्य है। हमारी शारीरिक-मानसिक क्रिया की मर्यादा है। हम कितना कर सके? हमारी औकात कितनी? अत: अमुक वस्तु कृपासाध्य है। उसकी कृपा हो तो ही कर सके। उसकी कृपा हो रही है पर हम ग्रहण नहीं कर पाते। इसका एक ही कारण तुलसीदासजी ने बताया है कि हम चतुराई नहीं छोड़ते! चतुराई माने लुच्चाईभरी होशियारी। हम अपने भीतर पूछे तो नहीं लगता कि हम कितनी चतुराई करते हैं! हम पांव भी छूते हैं और पीछे से मजाक भी उड़ाते हैं! तब कृपा तो ऊतरती है, परंतु चतुराई उस कृपा को पहुंचने नहीं देती।

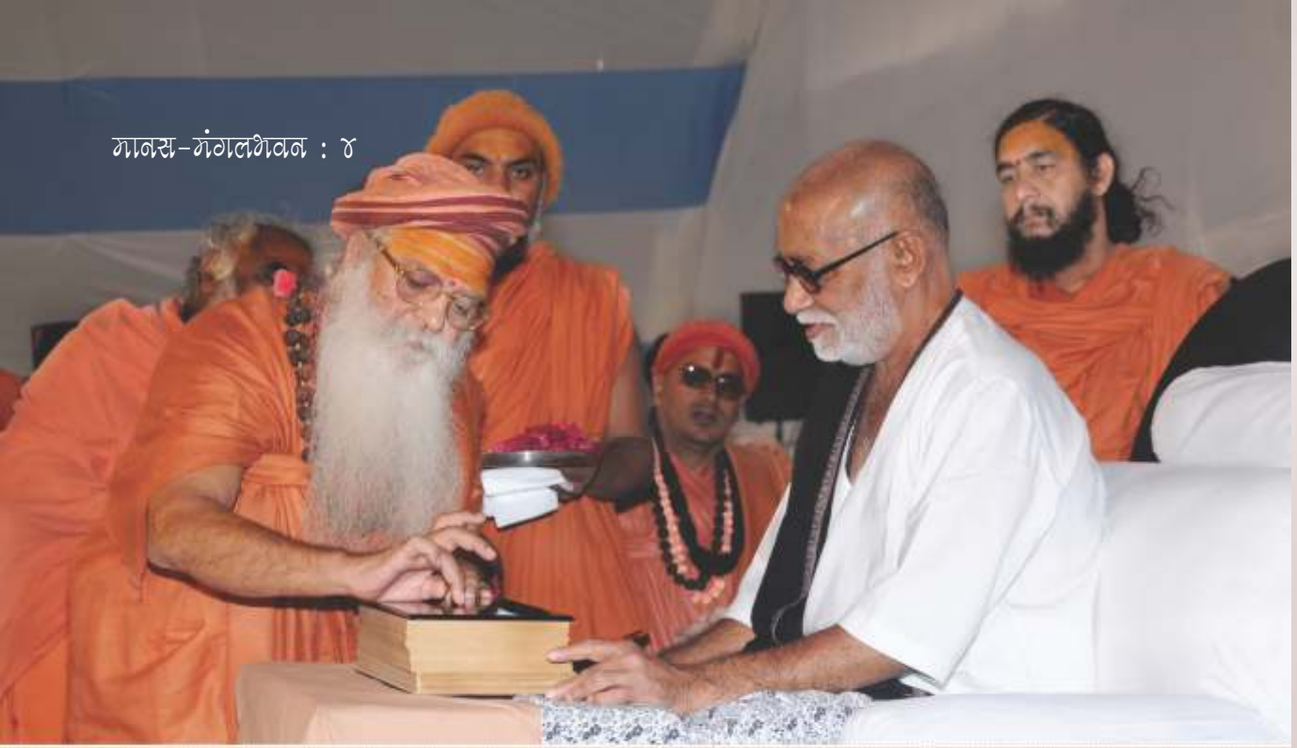

संत-समागम का सुख यह आध्यात्मिक सुख है

गत शाम को आप सबसे मिलना हुआ। आप सब भाव से आए। दो युवा सरस्वती के उपासक, उन्होंने अपनी चारणी जबान में परिचय दिया। दिगुभाई ने अपनी मूंछ का परिचय दिया! आनंद हुआ। प्रणव ने कविता लिखी है -

केम लागती रणनी रेती पहेलां करतां श्वेत?
हेत ढळ्युं छे हेत.
नर्यां झांझवां मळे, मळे ना एक चांगलुं पाणी;
एक सामटी फूटी गई, त्यां व्हालपनी सरवाणी.
चास नथी तो शुं? अहींया छे श्वासेश्वासे खेत;
हेत ढळ्युं छे हेत.

किसीने लिखा है, 'बापू, एक संत ने हमें संकेत दिया था कि ॐ से राम तक पहुंचो; बापू, हमें तो समझ में नहीं आया, कुछ कहे।' कल कहा था कि जहां पहुंचना है, वहां ओलरेडी हम है।

ना गगन सुधी, ना धरा सुधी, नहीं उन्नति, ना पतन सुधी.
बस आपणे तो जवुं हतुं फक्त एकमेकनां मन सुधी.

- गनी दहींवाला

फिर ॐकार से राम तक हो या राम से ॐकार तक हो; जिसकी जैसी मर्जी, पर मुझे तो गुरुकृपा से इतना समझ में आया।

एक श्रोता ने ऐसा कहा कि हैदराबाद की कथा में भवन के अन्य प्रकार व्यासपीठ ने कहा था -

निजभवन गवनेउ सिंधु श्री रघुपतिहि यह मन भायउ।
तजी सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना।

पर यह जो सुख के प्रवाह हैदराबाद में कहे गये होंगे। वे भौतिक सुख नहीं थे। ज्यों कल कहा था कि 'पहेलुं सुख ते जाते नर्या।' तंदुरस्ती प्रथम सुख है। अच्छी संतान सुख है। हैदराबाद में 'मानस' अंतर्गत आध्यात्मिक सुख की बात की है।

निज सुख, अपना सुख। हमें पता है, शास्त्र में काम की एक व्याख्या है। ज्यों धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष। काम की व्याख्या; काम माने विषय-भोगादि। काम का शास्त्रीय अर्थ है, दूसरों के कारण मन को सुख मिले ऐसी आशा काम है। मुझे रूपये मिले तो वह काम है। मुझे सुंदरता मिले, सुख मिले वही काम है। जो सुख अन्य द्वारा प्राप्त करने की अपेक्षा जगती हो इसीका नाम काम है। 'मानस' में आध्यात्मिक सुख का वर्णन जब आया तब लिखा, निज सुख; मुझसे मेरा सुख मिले। मानव को अपनी तृप्ति मिलनी चाहिए। वही निज सुख है। मन को स्थिर करने की भारतीय शास्त्रों ने, योगाचार्यों ने, दर्शनशास्त्रियों ने, पाश्चात्य महानुभावों ने भी कोशिश की है। परंतु तुलसीदास मन को स्थिर करने का बिलकुल सरल, सर्वग्राह्य उपाय बताते हैं -

निज सुख बिनु मन होइ कि थीरा।
परस कि होइ बिहीन समीरा।।

हवा न हो तो आप किसी का स्पर्श न कर सको। संतों में प्रयोग से वैज्ञानिक सूत्र नहीं आते, बुद्धपुरुषों के प्रसाद से आते हैं। प्रसाद का एक अर्थ है प्रसन्नता। दु:खों के न रहने से प्रसन्नता आती है। 'प्रसन्नचित्ते परमात्म दर्शनम्।' जगद्गुरु शंकराचार्य कहते हैं, आपके चित्त में परमात्मा हो वही परमात्मा के दर्शन है। प्रसन्नचित्त वही परमात्मा दर्शन। बाप, हम प्रसन्न नहीं रह सकते। क्योंकि हम श्रद्धा में नहीं है, हम स्पर्धा में है। हमें ईर्ष्या होती हो तो हम स्पर्धा में है, श्रद्धा में नहीं। प्रसन्नचित्त क्यों न हो? क्या यों साधु आठों प्रहर आनंद में रहते हैं? हमें द्वेष होता है इसीलिए हमारी प्रसन्नता बरकरार नहीं रहती। वैज्ञानिकों को प्रयत्न से वैज्ञानिक सूत्र प्राप्त होता है, बुद्धपुरुष को प्रसाद से होता है। हवा न हो तो भला किसी का स्पर्श कर सके? आध्यात्मिक सुख कौन-सा है? मुझे मेरा आनंद है। अपनी-अपनी तृप्ति होती है।

सूत्र में चार वस्तु का ध्यान रखना है। काफी सूत्र चखने जैसे होते हैं। तीखा लगे तो चखकर छोड़ देना। आम खट्टा हो तो चखकर रख देना। कई सूत्र गले से नीचे उतर जाते हैं। चखना भी न पड़े। कई चबाने जैसे होते हैं। पर कई सूत्र पचाने योग्य होते हैं। ऐसे सूत्र आध्यात्मिक सुख के हैं। सुख की एक परिभाषा यह भी कि हम सब सुखी होने के लिए दु:खी होते हैं! यह अमंगल है। लेकिन दूसरों को सुखी करने के लिए दु:खी होना यह परम मंगल है। यह पचाने जैसा सूत्र है। मुझे इसमें जीवन का पूर्ण सत्य समझ में आता है।

मूल बात चुकनी नहीं चाहिए। एक आदमी का कीमती घोड़ा गुम हो गया। सभी पूछने लगे कि घोड़ा खो गया, फिर भी आप इतने प्रसन्न क्यों है? कहने लगे, उस पर बैठा होता तो मैं भी खो गया होता! देह भले गुम हो जाय, प्रसन्नता रहनी चाहिए। हम घोडे की चिंता करते हैं! यह उपदेश नहीं।

कही। जागृति मंगल है। लक्ष्मण की जागृति मंगल सिद्ध हुई; राम की तुरीयावस्था। राम तुरीयातीत है। सभी आध्यात्मिक रहस्य 'रामायण' के हैं। चारों भाईयों की पत्नियां और यह जीव जिसे तुलसीदास ने कहा, 'जनु जीव अरु आरि' अवस्था, उनके विभुओं के साथ मंडप में बिराजमान है। 'बालकांड' में बिलकुल तत्त्वज्ञान का शिखर विवाह मंडप में है।

स्वप्न मंगल है। स्वप्न आए वह अच्छा है या नहीं? उसका निर्णय कैसे करे? भगवान महावीर स्वामी की माता को सपने आए। 'मानस' में तो 'सुंदर गौर सुब्रिप्रबर अस उपदेसेउ मोहि।' पार्वती कहती है, माँ, मुझे एक सपना आया। उसमें सुंदर ब्राह्मण, गौरवर्ण उसने मुझे उपदेश दिया कि पार्वती, तू तप कर। और वह स्वप्न, पार्वती का स्वप्न, भवानी का स्वप्न, जगदंबा का स्वप्न। उसने हिमालय को बुलाकर कहा कि अपनी पुत्री को ऐसा स्वप्न आया। कुंती का सपना, उत्तरा का सपना; और 'रामायण' में दूसरा स्वप्न त्रिजटा को आया। राक्षसियां सीताजी को परेशान करती थी अत: त्रिजटा ने राक्षसियों को कहा कि मुझे एक सपना आया है कि -

स्वप्ने बानर लंका जारी।

एक बंदर ने पूरी लंका जला दी! हनुमानजी ऊपर बैठे हैं। युवा भाई-बहन, समस्या आने से पहले समाधान ओलरेडी आ जाता है। ऊपर देखना। हमें नीचे देखने की आदत पड़ गई है। ओशो ऐसा कहते थे, मन्सूर को जब सूली मिली तब उसका चरणस्पर्श करने के लिए एक लाख आदमी इकठ्ठे हुए थे। तब मन्सूर हंस रहा था! एक लाख आदमी ऊपर देख रहे थे तब मन्सूर को देखकर फकीर ने कहा था, आप हंसते क्यों है? कहा, 'मुझे मेरी कुर्बानी का आनंद है।' 'क्यों?' तो कहा कि इसी बहाने एक लाख आदमियों की दो लाख आंखों ने ऊपर देखने की आदत तो डाली! गीध दृष्टिवाले हम ऊपर उड़ते हैं और नीचे देखते हैं!

उच निवास नीच करतूती।

बाप, कभी भी डिप्रेस मत होना। चारों ओर देखना। शक्य हो वहां तक ऊपर देखना कि कौन आया है? किसी न किसी रूप में त्रिजटा माने ज्ञान-भक्ति-कर्म की चोटी बांधकर आ गया होगा। तीन वस्तु के योग को त्रिजटा कही है। जानकी एक जटा, नितांत शरणागति। त्रिजटा को एक सपना आया और सच हुआ।

मुझे किसीने पूछा, 'बापू, कल आपने कहा था कि बीड़ी पीने का मन हुआ। मुझे जानना यह है कि आपको और क्या-क्या इच्छाएं हुई थी?' साहब, मैं तो साधारण आदमी हूं। पर 'संत' शब्द बोलने से आधे पवित्र हो जाते हैं। हो जाये तो क्या-क्या हो जाए! यह आपका कथाप्रेम है। छोटा था तब भीखाराम चाचा के संस्कार के कारण फिल्म देखने का मन हुआ था। कारण अच्छा संगीत पसंद आए; सुंदर शब्द अच्छे लगे; सुंदर नृत्य की प्रस्तुति भाए। किसी सत्य की प्राप्ति हो अत: ऐसा मन होता था। साहब, क्रिकेट खेलने का मन होता था। खेत में क्रिकेट खेलते थे। राम भजने का मन होता था। तुलसी की माला बनाने का बहुत मन होता था। कथाश्रवण का मन होता था। जहां कथा हो, पैदल पहुंच जाता था। रात को आख्यानश्रवण और भवाई देखने का मन होता था। अडदिया (मीठाई-अडददाल की) खाने का मन करता था। रेल्वेलाईन पर अकेले-अकेले चलकर कथा गाने का मन होता था। मुझे वृक्षों ने बहुत सुना है। तभी से हिन्दी

मळी छे एकांत्युं, मारा मावा मोले आवजो रे.
जोई जोईने वोरीये जात्युं, बीबां विण पडे नहीं भात्युं.
भार झीले भींत्युं रे, मारा मावा मोले आवजो रे.

ऐसा रण जैसा एकांत कहां से मिले? स्मशान जैसा एकांत! जहां अकेला महादेव रहता हो। मुझे खुद से सुख मिले, उधार नहीं। जगत का नियम है, आया सुख जायगा। जो आये सो जाये। अत: रामकथा सुखभवन है। परमात्मा मंगलभवन और उसका आध्यात्मिक सुख वह अपना भीतरी सुख है।

दूसरा, 'स्वान्त: सुखाय', आत्मसुख, आध्यात्मिक सुख। 'संत मिलन सम सुख जग नाहि।' किसी संत का मिलन जगत में दुर्लभ है। ऐसा ही आध्यात्मिक सुख है। या जिसे मिलने से कुछ सुख हो उसमें कुछ संतत्व उतरा है ऐसा समझना। शांति दे वो संत। संत-समागम का सुख यह आध्यात्मिक सुख है। जिसे किसीसे मनभेद न हो वही संत है। धैर्य से हरिभजन करे वही संत है। प्रदर्शन करना नहीं। दलपत पढ़ियार कहते हैं, 'कोई रे उतारो मारो अंचळो।'

'महाभारत' में इन्द्र ने कर्ण के कवच और कुंडल के लिए। 'रामायण' में इन्द्रजित ऐसे लक्ष्मण ने शूर्पणखा के नाक और कर्ण ले लिए। दोनों के पीछे आध्यात्मिक संकेत है। एक बार कर्ण योगेश्वर के सामने रोता है, कहता है मुझे आप पर चीढ़ है और वह मैं कभी भी उतारूंगा नहीं। इसमें मेरा ही फायदा है। कृष्ण ने कहा, 'ओर किस पर है?' तो कहा, 'कुंती पर।' कृष्ण ने कहा, मैंने तुझे अपमानित किया और कुन्ती ने जनमते ही त्याग दिया इसीलिए चीढ़ है? तो कहे, एक ही कारण है। आपने मुझे सच क्यों बताया कि मैं ज्येष्ठ पांडव हूं। यह वस्तु मुझे मार डालती है। एक ओर मेरा मित्रधर्म, दूसरी ओर यह धर्म! गोविन्द, आपने मुझे फंसा दिया! आपका उपकार भी नहीं भूलूंगा। क्योंकि त्वचा स्पर्शेन्द्रिय है। इन्द्र को भेजकर मेरी त्वचा खींचवाली। मेरी आपकी ओर से जो संवेदना थी वह लुप्त हो गई।

इन्द्रजित लक्ष्मण, परम जाग्रत लक्ष्मण नाक और कान ले ले और इन्द्र त्वचा और कुंडल ले ले। 'महाभारत' अद्‌भुत शास्त्र है। ज्यादा समझ में न आए तो भी चखने जैसा है! गले से नीचे उतारना हो तो गले से नीचे उतारने दो। चबाने जैसा लगे तो चबाने जैसा है। व्यास की कृपा से पचा सको तो इस जैसा पचाने जैसा कोई मुद्दा नहीं है।

मूल बात, संत-समागम सबसे बड़ा सुख है। जगद्‌गुरु शंकराचार्य ने कहा, संतत्व गंवाकर महंतत्व पीना अच्छा नहीं है। तो, निजसुख, आत्मसुख, संतसमागम का सुख, भक्तिमणि का सुख, भजन करने का सुख, संतोष का सुख ये सभी आध्यात्मिक सुख है। ये सब हैदराबाद की कथा में कहा जा चुका है।

राम मंगलभवन है। 'मानस' मंगलभवन है। राम का नाम भी मंगलभवन है; राम का रूप भी, राम की कथा भी मंगलभवन है।

मंगल करनि कलि मल हरनि तुलसी कथा रघुनाथ की।

राम की लीला मंगल; नाम मंगल, धाम मंगल, रूप मंगल, ऐसे मंगलभवन को सोचते ऐसे सूत्र प्राप्त हो रहे हैं। शंकराचार्य ने बत्तीस साल की उम्र में क्या किया? 'चित्ते एकाग्रता।' सभी आचार्य अद्‌भुत है। शंकराचार्य को किसीने पूछा कि 'समाधान किम्?' समाधान की व्याख्या क्या है? 'चित्ते एकाग्रता।' चित्त की एकाग्रता हो वही समाधान है। तो जिस शंकराचार्य ने निद्रा को समाधि स्थिति कही और कुंभकर्ण की निद्रा को मंगल

में बोलने का शौक है। जब उस उम्र में अकेले में कथा कहता, चौपाईयां गाता-गाता पांच कि.मि. रेल्वे लाईन पर चलता रहता था। ऐसा सब होता था।

'आपने साईकल के सिवा और वाहन चलाया है?' तीन बार साईकल चलाने से घूटने छील गए तब ज्यों-त्यों सीखा! एक बार ट्रेक्टर चलाया। गांव के पटेल ने लिया था। पर मैं सीख नहीं पाया। कार नहीं चला सकता। कभी भी कोशिश नहीं की।

'आप इतनी अच्छी एक्टिंग कर लेते हैं, कभी भी कोई रोल करने का मन होता है?' स्कूल में दो बार नाटक में काम किया था। तलगाजरडा की स्कूल में शिक्षकों ने नाटक तैयार करवाया था। उसमें एक गरीब भिक्षुक बालक का रोल किया था। वह रोल मुझे पसंद आया था। एक बार हाईस्कूल में 'जूनी आंखे नवुं' नाटक प्रभाकर साहब ने तैयार करवाया था, उसमें मेरा पांच-दस मिनट का रोल था। बस इतना ही।

तो, 'रामचरित मानस' में जिन्हें सपनें आए ये सभी मंगल है। पर प्रश्न यह है कि स्वप्न यह साधक की अच्छी स्थिति है या नहीं? मैंने 'रामायण' सीखी और दादाजी समाधिस्थ हुए फिर मुझे सपने आने बन्द हो गए हैं। सपने नहीं आते यह अच्छा है या बुरा, पता नहीं। अपने मानसविद कहते हैं कि आदमी को सपने आते हैं पर वे भूला दिए जाते हैं। मुझे सपने नहीं आते। शास्त्रकार कहते हैं, स्वप्न मंगल है। मैंने ऐसा कहा है कि बिना निंदा का दिन जाय और बिना सपना की नींद आ जाय यह साधक की तंदुरस्ती मानी जाती है। यह मेरा वक्तव्य है। प्रगाढ नींद हरिस्मरण है। विनोबाजी ने अद्‌भुत सूत्रपात किया है। शंकराचार्य कहते हैं, 'निद्रा समाधि स्थिति।' अब आपको सपना न आए ऐसा लगे तो क्या करना? प्रगाढ नींद आ जाय तो अच्छा। मुझे मेरे दादा ने कहा था फिर उनकी कृपा से मुझे विचार आया करे। मेरे बालमानस में बीज डाला था कि बेटा, खूब नामस्मरण करना। बुरे सपने नहीं आयेंगे। उनकी कृपा

युवा भाई-बहन, समस्या आने से पूर्व समाधान ओलरेडी आ जाता है। ऊपर देखना है। हमें नीचे देखने की आदत पड़ गई है! ओशो ऐसा कहते थे कि मन्सूर को जब सूली मिली तब उनके चरण छूनेवाले एकाध लाख लोग इकट्ठे हो गए थे। मन्सूर हंस रहा था! एक लाख आदमी ऊपर देखते हैं तब इस मन्सूर को देख फकीर ने पूछा, आप क्यों हंसते हैं? कहा, मुझे कुर्बानी का आनंद है। कैसे? तो कहा, एक लाख आदमियों की दो लाख आंखों को ऊपर देखने की आदत तो पडी! गीध की दृष्टिवाले हमें उड़ना ऊपर और देखना नीचे! कभी भी डीप्रेस ना होना। चारों ओर थोड़ा देख लेना। संभव हो वहां तक ऊपर देख लेना कि कौन आया है? तो आ गया होगा किसी न किसी रूप में!

होगी। साधुवचन था। सपने बंद हो गए। तो, मैं दृढता से कह सकता हूं। हम आदमी है तो समस्या तो होगी। आदमी को उसकी कमजोरियों के साथ स्वीकारना चाहिए। कभी हम में नीरसता आए तो नामस्मरण में निष्ठा तो रहनी ही चाहिए।

एक वस्तु, जिसके कारण पूरे हो गए हो, बात पूरी हो गई। ये सब पूरे करने और फिर भी रह जाय तो विवेक पर छोड़ देना चाहिए। अपना विवेक टिकाए रखिए। फायदा होगा। दूसरा, सोने से पहले बहुत ही स्वच्छ और स्वस्थ होकर सोना। हो सके तो धुले हुए कपड़े पहने। इसकी असर होगी। प्रगाढ निद्रारूपी हरिभजन शुरू होगा। तीसरी वस्तु, दिन के दौरान हमारे मन को प्रसन्नता मिले ऐसी प्रवृत्ति करनी चाहिए। रात सुंदर होगी। चौथी वस्तु, सबको बहुत प्रेम से हिलना मिलना पर अपने एकान्त को बरकरार रखना। कठिन है, पर दूसरों को मिलो तब ऐसा लगना चाहिए कि हमारे साथ प्रेम से बातें करता है; फिर भी हमें अपनी अलिप्तता बरकरार रखनी चाहिए। एक प्रामाणिक डिस्टन्स रखना चाहिए। संग का दोष लगे बिना नहीं रहता। संग रखना हो तो एक का रखना चाहिए।

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा।
दूसरी रति मम कथा प्रसंगा।।

'भागवत', 'देवी भागवत', 'रामायण'; सभी शास्त्रों का किसी साधु के साथ संग हो जाय, संत से अलिप्तता हो जाय तो मोक्षद्वार अपनेआप खुल जाय। बाप, सबसे हिलमिल कर प्रेम से रहिए, पर अलिप्तता रखिए। यह भी एक प्रगाढ़ निद्रा का सूत्र है।

कबीरा कुआ एक है पनिहारी अनेक।
बरतन सब न्यारे भये पानी सबमें एक।

राधा का सुमिरन अखंड था। वह आह्लादिनी शक्ति है। द्रौपदी का स्मरण अखंड नहीं था। द्रौपदी में रोष है। वह अग्नजा है। उसमें विद्रोह है। पर जब उसका समग्र दायित्व पूरा होने पर प्रमाण मिलते हैं, द्रौपदी 'कृष्ण...कृष्ण...कृष्ण' भजती हैं। हमें यह सीखना चाहिए। समय मिलने पर गंवाना नहीं चाहिए। गोपियां सब कुछ करती थी। पर जब निवृत्त हो तब 'जय राधा माधव...' इसके सिवा हम क्या कर सकते हैं? हमारे हाथ में तो यह हरिनाम है। जापक का शब्द भी निकल जाय तब भक्तिमार्ग में यह कर लेना। 'हे हरि, तेरा ही शरण है। और हम कहां जाय? हमें गये गुजरे पशु नहीं होना है। हमें यहां जीना है।'

भगवान कृष्ण जब निर्वाण की दिशा में जाय तब ये किसका नाम लेते होंगे? महादेव सोमनाथ के दर्शन कर चल पड़े है। 'हे सोमेश्वर!' दाऊभैया साथ में है। कृष्ण सोमनाथ के पुष्प और बिली लेकर बलराम की आंखों को लगाते हैं। पांच हजार बरस बीत गए फिर भी यह हमें छोड़ता नहीं है! उसका हंसना, बोलना याद आता है। भजन माने क्या? ऐसी स्मृति। शब्द हो या न हो जरूरी नहीं; स्मृति शेष रहे। अर्जुन सात सौ श्लोक के बाद कहता है, 'स्मृतिर्लब्धा।' जब मूल की स्मृति आती है तब पानी कम हो जाता है। संस्कृत में जल को जीवन भी कहते हैं। जल तो कीचड़ में भी होता है। पवित्र नदी में भी होता है। तत्त्व एक ही है। पर कीचडयुक्त जल नहीं पीया जाता। स्मृति जब दूषित होती है तब स्मृति महान होने पर भी नुक्सानदेही है। पर स्मृति जब स्वच्छ हो अर्जुन की तरह हो जाय, नंद-यशोदा की तरह हो जाय, तब बेडापार हो जाता है। रामकृष्ण ठाकुर को स्मृति

उमड़ती और आंखें बरसती तब गाते थे -

आमी दुर्गा, दुर्गा, दुर्गा, बोले...

'किष्किन्धाकांड' में एक चौपाई है -

पंक न रेनु सोह असि धरनी।
नीति निपुन नृप कै जसि करनी।।

वर्षाऋतु में कीचड़ और ग्रीष्म में धूलि उड़ती हो, दोनों मौसम मदद नहीं करते। शरदऋतु निर्मल ऋतु आई। शरण माने मानवी का अंत:करण। उसमें रही हुई निर्मल स्मृति। भक्ति निर्मल ऋतु है। भक्ति ऐसी शारदीय पद्धति है जो व्यर्थ कालत्व से बचाती है। मंगलम् स्वप्न; मंगलम् काम; मंगलम् क्रोध; मंगलम् लोभ। इनका जवाब साधार 'रामचरित मानस' देता है।

कथाप्रसंग में सती ने देहत्याग किया। हिमालय के यहां पार्वती प्रकट हुई। नारदजी ने हस्तरेखा देखी। इस कन्या को कैसा वर मिलेगा यह कहा। पार्वती ने तप किया। फल मिला। आकाशवाणी हुई कि 'शिवप्राप्त होंगे।' भगवान शिव को समाचार दिए गए। भगवान शिव सप्तऋषि को पार्वती की परीक्षा करने भेजते हैं। पार्वती के प्रेम की बात सुनकर शिव को समाधि लगी। बीच में एक घटना हुई। ताडकासुर ने समस्त दैवी समाज को बहुत परेशान किया। ताड़कासुर को ब्रह्मा से वरदान था कि मुझे जगत में कोई नहीं मार सकता। मेरी मृत्यु असंभव है। शंकर का पुत्र ही मुझे मार सकता है। महादेव समाधि में है। भगवान शंकर को जगाने की कामदेव की स्तुति की। काम प्रकट हुआ। देवताओं ने कहा, तुम शंकर की समाधि का भंग करो। उनमें काम जाग्रत करो। काम मंगल है। कामदेव ने कहा, शंकर का विरोध मेरी मृत्यु है! पर परोपकार जैसा कोई धर्म नहीं। आप जीवित रहते हो तो मैं मरने के लिए तैयार हूं। कामदेव असुर नहीं अत: समाधि तोड़नेवाले भी देव है। अत: काम मंगल है।

कामप्रभाव सर्वत्र व्याप्त हो गया। योगीश भी कामवश हुए तो सामान्य आदमी की क्या हैसियत? कामदेव ने भगवान शंकर पर बाण चलाया। ताड़कासुर ने जगत में हाहाकार मचाया है और शिव आंखें बंद कर बैठे हैं वहां काम सार्थक होता है। काम ने राम का कार्य किया। इसे अब मंगल कहे या अमंगल? बाण मारा। शिव को क्षोभ हुआ। तीसरा नेत्र खुलते ही कामदेव भस्म हुआ हैं। देवताओं ने महादेव से ब्याह रचाने को कहा है। भगवान ने अनुमति दी। श्रींगी, भ्रींगी और ध्रींगी ने भगवान को सजाया है। भस्म लगाई। मृगचर्म पहनाया। नंदी पर बैठे हैं। नंदी धर्म का प्रतीक है। पूरी दुनिया से भूत-प्रेत आए हैं। सभी नाचते हैं। गीत गाते हैं। हिमाचलवासी स्वागत करते हैं। स्वर्णथाल में दीप प्रकट कर मैना महादेव की आरती ऊतारने गई। शंकर के भाल में चंद्रमा देखकर हाथ में से थाली गिर जाती है! महादेव का भीषणरूप देखकर मैना मूर्छित हो गई है! नारद तथा ऋषि निज मंदिर में आते हैं। नारदजी समझाते हैं कि यह जगदंबा है। यह सदासर्वदा शिव अर्धांगिनी जगदंबा है। आंगन में जो है सो शिवतत्त्व है। सभी पार्वती को प्रणाम करते हैं। शिव के सन्मुख हिमाचल कन्या विराजमान है। लोकरीति, वेदरीति से महादेव ने पाणिग्रहण किया। विवाह संपन्न हुआ। समय बीतते पार्वती ने पुत्र को जन्म दिया। कार्तिकेय का जन्म हुआ। कार्तिकेय ने ताड़कासुर को मारा। देवता और समाज को सुख मिला। कैलास के वटवृक्ष के नीचे महादेव बैठे हैं। पार्वती आकर कहती है कि मुझे रामकथा सुनाइए।

यह जगत मंगलभवन है, उसमें कुछ विशेष मंगल है

'मानस-मंगलभवन', जो इस कथा के केन्द्रीय संवाद का सूत्र है। हम सब जानते हैं, कहीं ग्रन्थ-दर्शन किया हो; किसी जगह सत्संग में, साहित्य में, शायरी में, मित्रों की महेफिल में, ऋषिमुनियों के ग्रन्थों में हमने कहीं पढ़ा हो, सुना हो। बाप, अपने यहां पांच विषयों का वर्णन है; उन विषयों के नाम आप सब जानते हैं। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध। इन पांच अलग-अलग इन्द्रियों द्वारा हमने विषय मान्य रखे हैं। यह बिलकुल जीवन का सत्य है। परंतु मंगलभवन की चर्चा है तब, समस्त मंगलमय है, क्योंकि हरिमय है। 'मंगलायतनो हरि', 'मंगलायतनो प्रभु।' आंख खुल जाय उसे तो कुछ भी अमंगल नहीं है और आंख न खुले तो मंगल भी अमंगल हो जाय! तत्त्वत: सब कुछ मंगल है। परंतु उसमें से कुछ विशेष मंगल है।

बाप, अमुक वस्तु विशेष मंगल है। मेरे साधक भाईयों और बहनों, बात पकड़ में आय और अनुभव में सच्ची लगे तो वह तुम्हारी है। किसी भी वस्तु को जब कीमत देखकर खरीदते हैं तब अपनी हो जाती है। उसी तरह वस्तु व्यासपीठ से प्रवाहित होती है। आप समय और शिस्त का मूल्य देते हैं, श्रद्धापूर्वक श्रवण करते हैं तब वह वस्तु आपकी है। यहां कोई चार्ज नहीं है। यहां चार्ज होना है। मुझे इस वस्तु का आदर है कि आप यहां श्रद्धा दे रहे हैं; समय और शिस्त दे रहे हैं।

बुद्धपुरुष तो हमारा थोड़ा-सा चिराग जला देते हैं। फिर 'अप्प दीपो भव।' फिर वह ज्योत हम दोनों की है। यह वस्तु हाथ से नहीं कान से ली जाती है। कान श्रवणेन्द्रिय है। बुद्ध के संघ में कुछेक भिक्खु ऐसे थे कि बुद्ध की सभा

में बैठते थे पर बुद्ध को सुनते नहीं थे; सिर्फ उनकी आंखों से ले लेते थे। कुछेक भिक्खु ऐसे थे कि केवल उनकी प्रस्तुति की अदा, वाणी, भावभंगिमा और संकेतों से पाते थे। कहते हैं कि कभी-कभी बुद्ध अपने हाथ में एक फूल लेकर बैठते थे और कितनों के भीतर फूल खिल जाते थे! वाणी की जरूरत वहां पड़ती है, जहां बोलना अनिवार्य होता है। सबूरी जैसा कोई भाषण नहीं है। मौन जैसा कोई संवाद नहीं है। स्वामीशरणनंदजी को बारबार याद करता हूं। प्रज्ञाचक्षु थे। उन्होंने सत्संग के अमुक प्रकार विभाजित किये थे। एक प्रकार मूक सत्संग का है; मौन सत्संग। बुद्धपुरुष का मौन संक्रामक होता है। यह तो माइक्रोफोन जैसी वैज्ञानिक सुविधा मिली। भगवान महावीर बोलते होंगे और उनके सन्मुख पांच हजार साधक बैठते होंगे तो कैसे सुन पाते होंगे? मुझे लगता है, भगवान महावीर स्वामी का मौन संक्रामक होता होगा और वह मौन उन सभी तक पहुंचता होगा।

तो बाप, अमुक वस्तु इस जगत में विशेष मंगल है। जगत मंगलभवन है। जब तक हमारी आंख न खुले तब तक थोड़ा अमंगल लगे। जब तक आपको बराबर न लगे तब तक समझना आंख बहुत बिगड़ी हुई है। क्या यहां सब कुछ खराब है?

भगवान राम अहिल्या का उद्धार करते हैं। आप 'मानस' का पाठ अच्छी तरह करते हैं। नियम हो तो तेजी से भी करते हैं। आप 'रामचरित मानस' को ठीक से देखे तो उसमें भी काव्यदोष बहुत है। अच्छा हुआ कि तुलसी ने कहा -

बंदउँ मुनि पद कंजु रामायन जेहि निरमयउ।
सखर सुकोमल मंजु दोष रहित दूषन सहित।।

इसमें थोड़ा टेढ़ामेढ़ा भी है, सुकोमल भी है। दोषमुक्त भी है, दोषयुक्त भी है। आंख खुले तब आगे का दिख पड़े, आंख न खुले तो नजदीक का भी दिखाई न दे। नजदीक में भी संदेह उत्पन्न होता है। आंख खुल जाय तब दूर का भी दिखाई दे। 'रामचरित मानस' काव्यग्रंथ नहीं, सद्ग्रंथ है। मंगल और विशेष मंगल का भेद रहता है। मंगल और अमंगल का भेद टूटता है।

भगवान राम महर्षि विश्वामित्र के साथ अहिल्या के आश्रम में आए हैं। अहिल्या पथ्थरदेह है। मंगल और विशेष मंगल की बात कहने यह कहता हूं। स्पर्श हुआ। सूनमून-सी पड़ी अहल्या में चैतन्य प्रकट हुआ। जीवन का एक उत्साह आया। किसी ने कहा है, निष्फल होना यह गुनाह नहीं है, निरुत्साही होना यह गुनाह है। निष्फल तो होते हैं। संसार में पुन: स्थापित होने का अवसर राघव ने दिया। गोस्वामीजी की कविता शुरू होती है, इसमें दोष है -

परसत पद पावन सोक नसावन प्रगट भई तपपुंज सही।

और साहब, जन्मे हो वो जन्म देते हैं। हमारे माँ-बाप जन्मे थे इसीलिए हमें जन्म दिया। पर जो प्रकट हुए हो वो प्राकट्य कराए।

भये प्रगट कृपाला दिन दयाला कौसल्या हितकारी।

एक रामजन्म की, एक अहल्या की दोनों स्तुति का मुझे दोनों का समांतर अर्थघटन करना है कि ये दो प्रवाह कैसे बहते हैं? कहां समानता है? जन्मे हुए जन्म दिलाए। प्रकट हुए प्राकट्य कराए। सो अहिल्या को प्रकट किया है।

देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही।
अति प्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहिं आवइ बचन कही।।

तो, अहिल्या स्तुति करती है। कहती है -

मैं नारि अपावन प्रभु जगपावन रावन रिपु जन सुखदाई।

यहां साहित्यदोष है। बड़े-बड़े साहित्य समर्थकों ने भूल बताई है। उसमें पंतजी भी है। पर शास्त्र केवल बुद्धि से थोड़े समझे जाते हैं? उसके साथ दिल जुड़ना चाहिए। हृदय में रही हुई सात्त्विक श्रद्धा का दोहन होना चाहिए। शब्द का आंगन बहुत बड़ा है पर दोहन नहीं! हृदय में गुणातीत श्रद्धा होनी चाहिए। गांव की बहनें गाय-भैंस को दोहे उससे पहले बर्तन धोती है। थोड़ा पानी उसमें रहने दे। दोहने से पहले गाय-भैंस के थन को धोती है। कभी-कभी हमारे पास पात्र होता है पर जल नहीं होता। थोड़ा जल चाहिए। थोड़ी नमी चाहिए। अब अहिल्या ने कहा कि 'मैं नारि अपावन', ठीक है कि मैं अपवित्र नारी, भूल हो गई। मैं अपवित्र स्त्री और आप प्रभु, जगपावन है। समस्त जगत को पवित्र करनेवाले परमतत्त्व है। फिर बोली 'रावन रिपु जन सुखदाई।' आप रावण के दुश्मन हैं। यहां रावण की कोई घटना नहीं है। अभी तो राम विश्वामित्र के साथ बाहर निकले है। ब्याह होगा। बनवास होगा; फिर पंचवटी, शूर्पणखा दंडित फिर खर-दूषण निर्वाण। रावण उत्तेजित हो; जानकी का अपहरण होने के बाद रावण की शत्रुता शुरू होती है। अहिल्या ये सब कैसे जान गई? यह प्रश्न साहित्यजगत के शब्दविधाता के लिए खड़ा हुआ था! यह कैसे हो सकता है?

मैं आपसे कहूं कि यह अहिल्या निकटतम को नहीं पहचान पाई तो उसकी दृष्टि रावण तक कैसे पहुंची? यह क्या है? इन्द्र गौतम बनकर आया पर अहिल्या पहचान न सकी। पर वह रावण रिपु तक कैसे पहुंची? अहिल्या गौतम के रूप में इन्द्र को पहचान न सकी। कई बार हम निकटस्थ शुभ और अशुभ तत्त्व को पहचान नहीं पाते। गौतम शुभतत्त्व, यहां इन्द्र अशुभतत्त्व! गौतम मंगल, इन्द्र अमंगल; पर पहचान नहीं पाई। उस वक्त अहिल्या की आंख में काम था, आज उसके सामने राम है। अब आंख और दृष्टि घूमते हैं। हम जीव है, आदमी है। इसलिए ऐसा होता है। इसमें नजदीक

'श्रीमद् भागवत' हो, 'भगवद्गीता' हो, 'रामचरित मानस' हो, 'उपनिषद' हो, पवित्र 'कुर्रान' हो, 'बाईबल' हो, कोई भी सद्ग्रंथ हो; उसका स्पर्श विशेष मंगल है। यूं किसी भी किताब का आदर होता है। किसी भी ग्रंथ को पैर न लगाए, ठोकर न मारे। सद्ग्रंथ का स्पर्श विशेष मंगल है। ग्रंथवंदना में शीख भाईयों ने ऊंचाई जानी है इतनी शायद किसी ओर ने नहीं जानी है। ग्रंथ को ही गुरु मानने की क्रांतिकारी उद्घोषणा रही। आप ग्रंथ का स्पर्श करेंगे और भले आपको कुछ भी न हो पर उसे पता चलेगा, उसने मेरा स्पर्श किया है, उसका आज का दिन सुधरना चाहिए। शास्त्र श्वास लेते हैं; शास्त्र जीवंत है, क्योंकि शास्त्रों में ऋषियों की चेतना पड़ी है।

का शुभ भी पहचान में नहीं आया। नजदीक का अशुभ भी समझ में नहीं आया। यह वही अहिल्या नजदीक का सत्य पहचान नहीं पाई उसे कैसे पता चला? क्या हुआ कि वह दूरस्थ देख सकी? साहित्यिक दृष्टि से दोष हो सकता है पर आध्यात्मिक दृष्टि से खुलापन है, प्रकाश है। अब आगे की पंक्ति -

अति निर्मल बानी अस्तुति ठानी ग्यानगम्य जय रघुराई।

जब मानव की बानी निर्मल बनती है। मानव का चित्त निर्मल बनता है। आदमी समझने लगता है कि जो तत्त्व है वह ज्ञानगम्य है यह ज्ञान से समझा जायगा। फिर उसे आगे का दिखाई देता है। इसीलिए अपने गांव का एकाध लडका भी जो तप पर बैठा है वह भविष्य कह सकता है। उसी तरह हमारी वाणी निर्मल हो, चित्त निर्मल हो, भीतर निर्मल हो तो साहब, सबकुछ मंगल दिखता है। दूर का भी देख सके। पर जब तक दूषित है तो नजदीक का शुभ भी शायद अमंगल दीखे। गौतम ने शाप दिया तब गौतम भी उसे अशुभ लगे हो पर राम ने आंख खोल दी तो वही अहिल्या क्या करती है?

मुनि श्राप जो दिन्हा अति भल कीन्हा
परम अनुग्रह मैं माना।।

मुझे मुनिने शाप दिया। यह मेरे लिए परम मंगल हुआ। मुनि ने बहुत अच्छा किया। मुझ पर अनुग्रह किया। क्योंकि यह घटना न होती तो मैं हरिदर्शन कैसे कर पाती? दृष्टि जब खुलती है तब अशुभ शुभ लगता है, शाप अनुग्रह लगता है। बहुत जल्दी निर्णय नहीं करने हैं। निर्णय करने से पहले सोचिए। सत्य सस्ता नहीं होता।

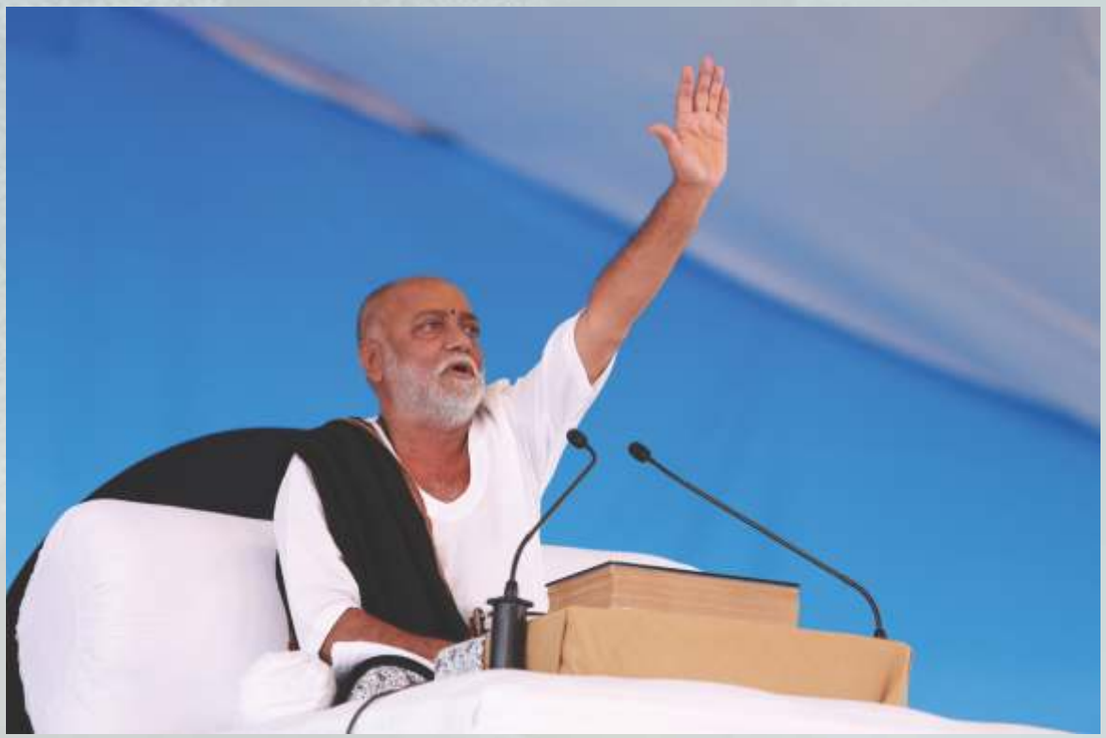

भगवान ने अहिल्या का उद्धार किया। गौतम ऋषि आए। भगवान ने दोनों का संग करवाया। एक नई बिदाई हुई। यह उद्धारक सदग्रंथ है। देरी से रहस्य खुलते हैं तब परम आश्चर्य होता है। जगत पिता अहिल्या को बिदा देते हैं। मंगल प्रकृति ने मंगल गीत गाये। 'गरीब पिता भी पुत्री को बिदा करे तब कुछ देता है, आप जगत तात है; कुछ कीजिए। जीव का क्या भरोसा? कहीं फिर से कहीं फंस जाऊं तो?' 'अहिल्या, तू बोल, क्या दूं? जिससे तुझे संतोष हो।' अहिल्या कहती है, 'मुझे एक ही फूल दीजिए। ढेर सारे फूल में हम भ्रमित हो जाते हैं। आपका चरणकमल दीजिए।'

समस्त जगत मंगल से भरा है, मंगलभवन है। इसमें कुछ विशेष मंगल है। मंगल-अमंगल के बीच यहां भेद नहीं है; कुछ विशेष है। अपनी इन्द्रियों के पांच विषय है - शब्द, रूप, रस, स्पर्श, गंध। सब से पहले शब्द ले। इस जगत में कौन-सा शब्द मंगल है? पांच शब्दों को मंगल जानिए। शब्द जीभ का विषय है। अपनी जीभरूपी इन्द्रिय का विषय शब्द है। यहां शब्द का अर्थ वचन है। पांच प्रकार के वचन विशेष मंगल है। आदि वचन ले तो हमारे लिए वेद वचन विशेष मंगल है। वेदों में से निकले उपनिषद भी ऐसा वचन कहे, 'मातृ देवो भव। पितृ देवो भव।' हमारे लिए यह विशेष मंगल है। कोई भी व्यक्ति हो पर जिसके मुंह से सद्वचन निकले वह विशेष मंगल है। फिर कौन कहता है इसे मत देखिए। वचन सद् होना चाहिए। मुझे फायदा हुआ है इसीलिए कहता हूं। वेदवचन विशेष मंगल वचन है। अर्थ चाहे समझ में न आए। वेद अगम है। बहुत समझने की जरूरत भी नहीं है। ध्वनि समझिए। कोई वेदवचन निकले तो कितना सुंदर लगे! वेदवचन मंगल है। सद्वचन मंगल है। क्योंकि उसके मुख से सद्वचन निकले यह दूसरा मंगल है। तीसरा मंगल सद्गुरुवचन; हमें जहां श्रद्धा हो चाहे कुछ भी हो जाय वहां से श्रद्धा नहीं उठा लेनी है। गंगासती याद आती है -

सद्गुरु वचनोनां थाव अधिकारी पानबाई,
ए जी, मेलो रे अंतरनां अभिमान रे ...

सद्गुरुवचन -

जासु वचन रबिकर निकर।

●

सदगुरु बैद बचन बिस्वासा।

चौथा मंगल, विशेष मंगल चौथा शब्द प्रियजन का वचन। आपकी प्रिय व्यक्ति का वचन यह विशेष मंगल है। पिता को पुत्र प्रिय हो तो पिता को पुत्र का वचन समझना चाहिए। क्योंकि प्रिय का वचन है। मालिक को नौकर प्रिय हो तो भले वो नौकर हो पर उसके वचन पर विचार करना चाहिए। पति पत्नी के वचन पर विचार करे, पत्नी पति के वचन पर विचार करे। किसी भी संबंध में प्रियता हो तो ये वचन विशेष मंगल है। प्रियता होनी जरूरी है। दो मित्रों के बीच प्रयुक्त प्रियवचन मंगल है। जिसे हम प्रिय वचन कहते हैं। वेदवचन, सद्वचन, सद्गुरुवचन और प्रेम यदि सच्चा हो तो प्रेमवचन। प्रियजन का वचन यह विशेष मंगल है। परमतत्त्व का वचन जो हमें विशेष भूमिका पर पहुंचाता है, ऐसा एक परमतत्त्व का वचन है। ये पांच वचन जगत में, मंगलभवन में, विशेष मंगल है।

दूसरा स्पर्श; किसी भी उम्र की मातृशक्ति चाहे वह कन्या हो, बहन हो, परिणीता हो, माता हो। पति की मृत्यु हो गई हो। किसीकी मातृशरीर का चरणस्पर्श विशेष मंगल है। प्रत्येक नारी को मर्यादा में रहना चाहिए। पर उसका चरण के प्रति पवित्र भाव यह विशेष

मंगल है। नारीजगत वंदनीय है। उसका स्पर्श विशेष मंगल है। तीसरा, बच्चे के सिर का स्पर्श विशेष मंगल है। जिसने भाव से अपना हाथ रखा हो उसकी हस्तरेखा बदलते देर नहीं लगती। चौथा स्पर्श सद्ग्रंथ का स्पर्श। 'श्रीमद् भागवत' हो, 'भगवद्गीता' हो, 'रामचरित मानस' हो, 'उपनिषद' हो, पवित्र 'कुर्रान' हो, 'बाईबल' हो, कोई भी सद्ग्रंथ हो। उसका स्पर्श विशेष मंगल है। ग्रंथवंदना में शीख भाईयों की ऊंचाई है। ग्रंथ को ही गुरु मानने की क्रांतिकारी उद्घोषणा की! आप सद्गुरु ग्रंथ का स्पर्श कीजिए। भले आपको कुछ न हो पर उसे पता लगेगा कि उसने मेरा स्पर्श किया है, उसका आज का दिन सुधरना चाहिए। शास्त्र श्वास लेते हैं; शास्त्र जीवंत है, शास्त्रों में ऋषियों की चेतना पड़ी है। सभी शास्त्र जीवनधर्मा है, मरणधर्मा नहीं। पांचवां, गौमाता का स्पर्श। गाय का स्पर्श पवित्र है। सुवर्ण स्पर्श भी मंगल है। ये पांच स्पर्श मेरी दृष्टि से मंगलभवन की अंतरंग वस्तु है।

पांच रूप विशेष मंगल है। उसमें पहला रूप रामरूप है।

राम रूपु भूपति भगति ब्याहु उछाहु अनंदु।
जात सराहत मनहिं मन मुदित गाधिकुलचंदु।।

राम का रूप बहुत ही विशेष मंगल है।

कंदर्प अगणित अमित छबि नवनील नीरद सुंदरं।
पट पीत मानहु तडित रुचि सुचि नौमि जनक सुतावरं।।

पर राम को हम एक फोर्म में देखें तो राम हम से दूर है। दूसरा रूप मंगल। मानवी का भीतरी स्वरूप विशेष मंगल है। जिसने भीतर जाना। श्रीहनुमानजी पहली बार जब रामजी से मिले; सुग्रीव के कहने से श्रीहनुमानजी महाराज ब्रह्मचारी के रूप में परीक्षा करने आते हैं तब हनुमानजी ने सिर झुकाकर राम से पूछा, 'आप कौन है?' संत ने इसका यह अर्थ दिया है कि हनुमानजी ने राम का बहिर्मुख देखा फिर सिर नवाया और भीतर जो स्वरूप था उसके साथ टेलि किया, यह वही है। प्रभु का रूप परम विशेषमंगल है। उसी तरह अपना भीतरी स्वरूप भी परममंगल है। भीतरी स्वरूप जो पकड़ में आता है, 'मानस' उसका जवाब देता है।

संकर सहज सरूपु सम्हारा।
लागि समाधि अखंड अपारा।।

तीसरा, नदी का रूप विशेष मंगल मानना चाहिए। कोई भी प्रवाहित नदी फिर चाहे गंगा हो ऐसा नहीं कहता। नदी सुंदर है। जीवन पवित्र और प्रवाही हो ये सभी रूप विशेष मंगल है। सो नदी का प्रवाह विशेष मंगलकारी है।

रामरूप, अपना स्वरूप, प्रवाहित नदी का रूप और सबके अपने-अपने सद्गुरु का रूप विशेष मंगल है। अपने-अपने बुद्धपुरुष का रूप। उसका शारीरिक रूप नहीं, उसका आध्यात्मिक रूप। अमीर खुशरो ने कहा था कि मेरे पीर जा रहे हैं। उन्होंने तो मुझे आत्मतत्त्व समझाया था कि आत्मा तो जाय पर मेरे लिए तो देह भी सुंदर था। बुद्धपुरुष के रूप की भी महिमा है।

तन भी सुंदर, मन भी सुंदर,
तू सुंदरता की मूरत हो...

यह सीधा गुरुगीत है। उसका मन यदि सुंदर हो तो ही गुरु कहे। नहीं तो लेबल-गुरु कहे! लेबल की जरूरत नहीं, लेवल ढूंढिए। एक मुकाम पर पहुंचा कोई महापुरुष!

किसी और को शायद कम होगी,
मुझे तेरी बहुत जरुरत है...

मुझे तो तेरी ही जरूरत है। हम आपके बिना कुछ नहीं। तू हो तो हम जैसा कोई नहीं। गुरु मुस्कुराता चाहिए। आप राम की छबि तो देखिए! 'मन मुसुकाई', उनके मन का मुस्कुराना। वास्तव में किसी बुद्धपुरुष के मिलने के बाद कोई एषणा बाकी नहीं रहती। फिर सब फीका लगता है।

गुरुपदरज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिअ दृग दोष बिभंजन।

उसकी आंख में गहराई है। होठ में से निकलते शब्द लाल है। प्रेम का रंग लाल है। उसके होठ प्रेमरूपी वचनामृत से रंगे हुए है। गुरु मंगल है। पांचवां विशेष मंगल। जगत में कोई भी रूप मंगल है। आंख ठीक रहनी चाहिए। किसी भी सुंदर व्यक्ति को देखने में वासना हो तो खराब है। पर जिसकी आंख में उपासना भरी है वह किसी का रूप देखे वह पाप नहीं। जो अंदर से डर गया है वह यह कहे, हम चहेरे नहीं देखते! यह एक दृष्टि से बहुत बड़ा अपमान है। किसी भी रूप को देखने की साधक को छूट है। सद्भाव से देखो। आकाश, सूर्य, वनस्पति, लता-पता यह सा'ब, राम कैसे देखे इसमें से तो कुछ सीखो! गलत अर्थ मत करो।

तात जनकतनया यह सोई।
धनुष जग्य जेहि कारन होई।।

गुरु चरणधूलि की एक महक होती है, एक खुश्बू होती है। भौतिक जगत में कोई भी पुष्प की गंध विशेष होती है। प्रकृति में खीले-विकसित पुष्प उसकी एक महक विशेष मंगल होती है। इसीलिए हम प्रभु को सुगंधी पुष्प चढ़ाते हैं। सुगंध की महिमा पूजा में भी है और प्रेम में भी। हम गंधाक्षत कहते हैं, सुगंधी अक्षत हम चढ़ाते हैं। तीसरे, शास्त्र की भी एक गंध होती है, ऐसा मेरा थोड़ा अनुभव है। आपकी थैली में 'रामचरित मानस' हो तो मुझे पता चल जाय। आप मिट्टी का इत्र इस्तेमाल करते हो तो आपको उसकी खुश्बू का पता चल जाय। हिना इस्तेमाल करते हो तो खुश्बू से पता चल जाय। 'मानस' के सभी शास्त्र का जो सार है; इसकी भी एक गंध है। जिसकी ग्रंथोपासना होगी उसे अनुभव मिले। भजनानंदी साधु की माला विशेष सुगंधी होगी। आप इत्र लगाए यह बात अलग है। उसके बिना भी नाम की गंध, नाम की खुश्बू, नाम की सुगंध।

गुरुचरणरज की, किसी भी फूल की अपने इष्टग्रंथ की खुश्बू और भजनानंदी महापुरुष के भजन और सिद्ध किया साधन फिर उसमें आसन भी आ जाय। आसन सिद्ध किया हो उसकी भी विशेष गंध होती है। यह मंगल विशेष सुगंध और पांचवां अत्यंत पवित्र महापुरुष, अत्यंत पवित्र व्यक्ति उसके श्वास और उच्छवास की गंध। एक अलग प्रकार की खुश्बू। यह सभी साधनों के क्षेत्र है। पांच शब्द, पांच स्पर्श, पांच रूप, पांच रस, पांच गंध।

पाकिस्तानी शायराना परवीन शाकीर की गज़ल है -

तेरी खुश्बू का पता करती है,
मुझ पे एहसान हवा करती है।

●

मुझको इस राह पे चलना ही नहीं,
जो मुझे तुझसे जुदा करती है।

कथा के क्रम में शिव को पार्वती प्रश्न पूछती है, रामकथा सुनाइए। भगवान शंकर भगवान का अवतरण क्यों होता है इसके कारण बताकर रामजन्म की भूमिका बांधते हैं। आज कथा को विराम। ये सारी बातें कल करेंगे।

कथा-दर्शन

- 'रामचरित मानस' काव्यग्रंथ नहीं, सद्ग्रंथ है।
- शास्त्र श्वास लेते हैं; शास्त्र जीवंत है, क्योंकि शास्त्रों में ऋषियों की चेतना पड़ी है।
- भरोसा होगा तो चौपाई जैसी कोई औषधि नहीं है।
- किसी बुद्धपुरुष के मिलने के बाद कोई एषणा बाकी नहीं रहती।
- बुद्धपुरुष का मौन संक्रामक होता है।
- सबूरी जैसा कोई भाषण नहीं है।
- गुरु चरणधूलि की एक महक होती है, एक खुश्बू होती है।
- हमारी समस्या हमारा गुरु ही उठा लेता है।
- दूसरों को सुखी करने के लिए दु:खी होना यह परम मंगल है।
- साधक की खोज मंगल और विशेष मंगल की ओर होती है।
- माला के मनके गिने जाये, आंसू नहीं गिने जाते।
- वैज्ञानिकों को प्रयत्न से वैज्ञानिक सूत्र प्राप्त होता है, बुद्धपुरुष को प्रसाद से होता है।
- अपना यह पंचभौतिक शरीर स्वयं एक ग्रन्थ है।
- अस्मिता में नमी होती है, अहंकार सूखा होता है।
- विशालता ये शाश्वतता का पर्याय है। मानव जितना विशाल उतना अमर है।
- हम प्रसन्न नहीं रह सकते, क्योंकि हम श्रद्धा में नहीं है, हम स्पर्धा में है।
- हमारी उन्नति की पतंग हमारे निकट के ही काटते हैं!
- निंदा अमंगल है, निद्रा मंगल है।
- ज्यों-ज्यों लाभ की मात्रा बढ़े, लोभ शुरू होता है।
- किसी भी आदमी के लिए शीघ्र अभिप्राय नहीं देना चाहिए।
- दरवाजें में प्रवेश करना हो तो हम दरवाजे से बड़े नहीं होने चाहिए।

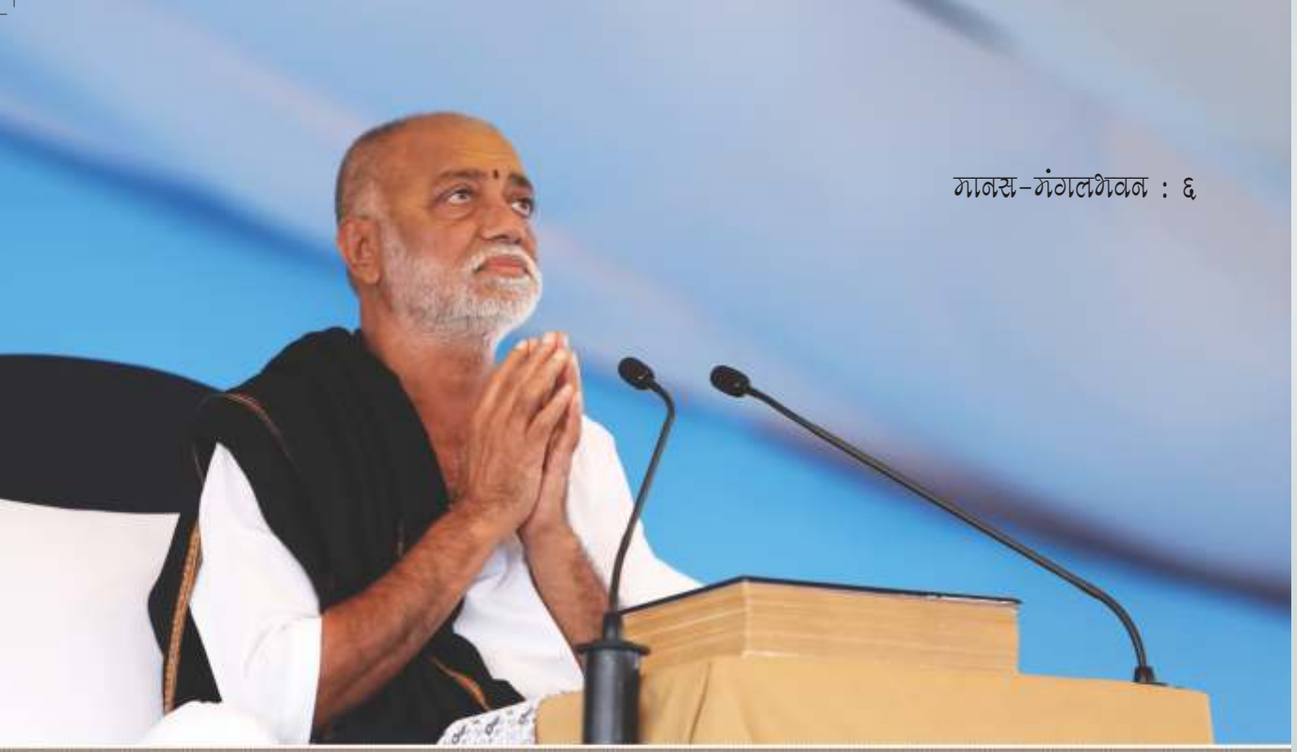

साधक की खोज मंगल और विशेष मंगल तत्त्व की होती है

'मानस' के आधार पर अन्य ग्रंथों के भी आधार पर, भिन्न-भिन्न संतों से सुने संदर्भ और गुरुकृपा से जो अनुभव किया हो ऐसी कुछेक बातें हम साथ में संवाद के रूप में कर रहे हैं। जिसको नाम दिया है, 'मानस-मंगलभवन।' कल हमने चर्चा की कि यहां सब मंगल है। मंगल और अमंगल का भेद करने के बदले मंगल और विशेष मंगल की खोज साधक के लिए जरूरी है। साधक का दरज्जा प्राप्त करने के बाद ऐसा समझ में आता है कि फिर मंगल-अमंगल का भेद शायद न रहता हो। पर मंगल और अमंगल की यात्रा शुरू होती है।

'रामचरित मानस' स्वयं मंगलभवन है। अत: इसके द्वारा मंगल की खोज करनी है अथवा विशेष मंगल की। कल मैंने छींक की बात की, तो एक भाई ने छींक सप्तमी लिखी है! मेरा संदर्भ आध्यात्मिक है या मानसिक है। केवल शारीरिक छींक की ओर मेरा संकेत नहीं है। हां, हल्के-फुल्के ढंग से आप से बातें अवश्य करूं। पर बात वही नहीं होती। नहीं तो व्यासपीठ मेरा जवाब तलब करे कि तुम्हारे साथ था वह कहां गया? प्रत्येक व्यक्ति मंच पर बैठकर आध्यात्मिक चर्चा करे, सुगम संगीत पेश करे, शास्त्रीय संगीत प्रस्तुत करे, लोकसाहित्य प्रस्तुत करे; रंगमंच हो, नाट्यप्रयोग होते रहे, पर मूल वस्तु चुक जाय तो उन्हें स्टेज भी पूछे कि तुम्हारे साथ था वह कहां है? बाप, व्यासपीठ की तो इसमें बहुत बड़ी मर्यादा है। बशीर बद्र का शे'र है -

इन रास्तों ने जिन पर कभी तुम साथ चलते थे,
मुझे रोककर पूछा कि तेरा हमसफर कहां हे?

हे पंथक, हे मार्गीय, हे साधक, महान के कदम पर चलनेवाले साधक, तुझे तेरा राही साया पूछता है कि हम तो तेरी राह देख रहे थे, तू कहां था? सत्य कहां गया? प्रेम कहां गया? करुणा कहां गई?

मैं देख रहा हूं। आज के तमाम मंच प्राय: आपके पास अपनी विद्या प्रस्तुत कर रहे हैं। पर उनके मन के मर्म गहरे हैं। उसे हम पकड़ते नहीं, सो हम मान लेते हैं कि यह हास्य का प्रोग्राम है। यह संगीत का प्रोग्राम है। यह समय जिम्मेदारी अदा करने का है। हमें हमारी जिम्मेदारी पूछती है कि तेरा हमसफर कहां है? तेरा गुरु कहां है? गुरु किसे कहे? परंतु गतानुगति न हो जाय। 'रामचरित मानस' के मित्राष्टक में लिखा है कि मित्र वह होता है जो लेन-देन में कोई शंका न करे। उसके बीच लेन-देन न हो। तो, गुरुदेव और आश्रित के बीच भी लेन-देन न हो। हो तो इतनी कि शिष्य गुरु को हाथ दे और गुरु शिष्य को चरण दे। इससे ज्यादा कुछ नहीं। शिष्य कौन? आश्रित कौन? जो गुरु को पहुंचा दे दे। गुरु कौन? जो अपने चरण दे। इसे लेन-देन नहीं कहते। तो कहां है बुद्धतत्त्व? क्यों भूले? वे अपनी भूमिका पूछते हैं। हम आदमी है, कभी भूल भी जाय पर यह तत्त्व तो साथ ही होता है।

तो बाप, साधक की खोज मंगल और विशेष मंगल की ओर होती है। सिद्धों का हमें पता नहीं। हमें न तो सिद्ध होना है न तो विषयी। मैं तो मार्गी हूं। मध्यम रहे। 'मानस' के आधार पर पूरा शास्त्र मंगलभवन है। तो हमें मंगल की खोज करनी है। जो वर्तमान जीवन में हमें उपयोगी हो। आदमी श्रवण करे यह अच्छा है। श्रवण से फ़र्क पड़ेगा। वेदांत भी श्रवण की बातें करते हैं। आरंभ श्रवण से ही हुआ है। लोग अच्छी तरह से सुनते हुए हैं। शायद यह कलियुग नहीं, श्रवणयुग है, कथायुग है, सत्संगयुग है।

मुझे किसीने पूछा कि मैं अपने गुरु का ध्यान धरता हूं तो मुझे गुरु नहीं दिखते, मुझे समुद्र दिखाई देता है। यह अपना एक अनुभव है। साधु-संतों के वार्तालाप से मुझे यह समझ में आया है कि किसी भी बुद्धपुरुष में आपको बहुत कुछ दिखाई दे। पर मैं थोड़ी स्पष्टता इसीलिए करता हूं कि किसी भी बुद्धपुरुष में आपको सागर दिखाई दे तो समझना वो सामने दिखाई दे वह सागर नहीं है। वह क्या है? इसका जवाब 'रामायण' में है। 'गुर बिबेक सागर जगु जाना।' उसे आप विवेक का सागर मानिए। सागर तो संकेत है ही। भगत बापू ने लिखा है -

सो सो नदीयुं समाणी अने आ तो सायर जळ गंभीर;
जगमां एनुं नाम फकीर ...
एनुं नाम फकीर अने जेनी मेरु सरखी रीत.

आपको अपने बुद्धपुरुष में वृक्ष दिखे यह संभव है। यह भी साधकों का अनुभव है। तो यह गुरु झाडी नहीं है। यह थोड़ा हेय और जड़ता दिखाए ऐसा शब्द है। झाड़ी कहना यह भी वृक्ष का अपमान है! झाड़-झंझाड जैसा तो होना ही नहीं है। ऐसा होने पर परोपकारी हो तो यह उपलब्धि है। संत के बाद यह दूसरे क्रम पर है। तीसरे क्रम पर नदी, चौथे पर पर्वत, पांचवें पर धरती इन सबने देह धारण किया है दूसरे का हित करने के लिए। जब गुरु की छबि में वृक्ष दिखे तब बाप, ऐसा समझना कि दो की संभावना है। वह वृक्ष या तो कल्पवृक्ष है; पर वह भी दूर की बात हुई। जब गुरु में वृक्ष दिखे तो समझना कि वह वटवृक्ष है। ये सब साधकों के अनुभव है। जब गुरु में पर्वत दिखे तो समझना यह कैलास है, नीलगिरि है, हमारा

गिरनार है। किसी को नदी का दर्शन हो तो बाप, समझना कि यह सामान्य नहीं; गुरु गंगा है। वह पतित पावनी है, निरंतर प्रवाह में जिसकी गति है।

तो बाप, साधक कक्षा पर यह सब संभवित है। हम विषयी ना रहे। साधक भूमिका में आए। जिसे सिद्ध होना है वे हो। बाप, बड़े होने का बहुत दु:ख है। यों सिद्ध होने का भी दु:ख है। विश्ववंद्य गांधीबापू को कोई पूछे कि आपको सुख मिला या दु:ख? कुल में, घर में, आपकी निकटस्थ व्यक्ति जब आप से दूर जाय, विरुद्ध जाय तब समझना हरि बहुत निकट है। उस समय पकड़ में आ जाय तो बेड़ा पार! पर वहीं डोल जाय कि वे मेरे थे? 'मानस' में प्रमाण है कि आपको मार डालने की तैयारी करे! लक्ष्मण उद्घोषणा उठाये हैं कि भगवंत, यह कैकेयी पुत्र है। विष की बेल को अमृतफल नहीं आते। भरत ऐसे थे? ऐसे है? चित्रकूट बिलकुल निकट हो तब ऐसे विघ्न आते हैं। उस समय धीरज रखनी चाहिए। उसे ही राम मिलते हैं। नाझिर देखैया ने लिखा -

पथिक तू चेतजे पथना सहारा पण दगो देशे.
धरीने रूप मंझिलनुं उतारा पण दगो देशे.
मने मजबूर ना करशो नहीं विश्वास हुं लावुं,
अमाराना अनुभव छे, तमारा पण दगो देशे.

सरदार, गांधी होने का दु:ख कठिन है। सिद्ध होना अच्छा नहीं, बहुत मुश्किल है। कुल में कोई नहीं मानता था! आप सोचिए तो सही, कृष्ण की मानसिकता कैसी होगी? 'महाभारत' में जब कर्ण को बारबार अन्याय होता है तब कर्ण की मनोदशा पढ़ने जैसी है। अर्जुन जब बहुत बोलने लगा तब कृष्ण ने कहा, 'अर्जुन, चूप रहना। इसके कवच-कुंडल उतार न लिए होते तो तेरा गांडीव और मेरा सुदर्शन चक्र इसे मार नहीं सकते थे।'

आप शांति से 'रामचरित मानस' पढ़िए। तुलसीदासजी ने युद्धकांड का कितना विस्तार किया है! वाल्मीकि ने भी किया है। सूर्य सूर्य ही रहता है, भले ही बीच में बादल आ जाय। इसमें सूर्य का दोष नहीं है। इसी तरह कर्ण कर्ण है, सूर्यपुत्र है। बीच में भले बादल छा जाय! कर्ण बहुत बड़ा आदमी है। पर उनके दु:ख को कृष्ण के सिवा कोई नहीं जानता। सिद्ध होना सरल नहीं है। विषयी में से मार्गी, साधक होना है।

'मानस' अंतर्गत प्रथम मंगल; जब अपने मन में जगत का भला हो ऐसा प्रामाणिक विचार उठे उस दिन समझना वह तत्त्व मंगल है, वह घडी मंगल है। तुलसी ने प्रमाण दिया है -

बेगि बिलंबु न करिअ नृप साजिअ सबुइ समाजु।
सुदिन सुमंगलु तबहिं जब रामु होहिं जुबराजु।।

दशरथजी ने ऐसा कहा कि मैं अब राज्य राम को सौंप दूं। सचिवों ने कहा कि जगत कल्याण का विचार रखा है। बाप, 'रामचरित मानस' रूपी 'मंगलभवन' में यह विचार मंगल है। मेरे और आपके मन में आए या मुझसे औरों का शुभ हो ऐसा विचार आए या तो मेरा अधिकार छोड़कर यह वस्तु अन्य को समर्पित कर देने के विचार को तुलसीदासजी ने मंगल कहा है। किसीको देने के लिए मुझे तीन कारण दिखाई देते हैं। एक, आदमी प्रभाव जमाने के लिए देता है। कई आदमी अभाव देखें और दे। अपने पास क्या था? छोड़ दो न! यह अच्छा है। फकीर दे देते हैं, जिसको स्वभाव और आदत में देना ही हो यह दिए बगैर रह नहीं सकता। ऐसा विचार आए उसे तुलसीदास ने मंगलभवन कहा है।

कोई हमें आदर देकर भाव से सुंदर वचन कहे उसे तुलसीदासजी मंगल कहते हैं। कोई मीठे बोल, सादर अधिकारी बनकर, पात्र बनकर इस रीति से हमारे पास खड़े हो फिर हम देने के लिए कुछ बोले, खाली वचन बोले उसे तुलसीदास भी मंगल के लिस्ट में स्थान देते हैं। 'रामचरित मानस' में तो लिखा है कि प्रसन्नता से गाईए। कोई भी गीत गाना; भजन गाइए, श्लोक गाईए। सुगम संगीत हो, शास्त्रीय संगीत हो, लोकसंगीत हो पर आप प्रेम से गाते हैं उसे मंगल कहा है।

गावहि मंगल कोकीलबयनीं
बिधुबदनीं मृगसावकनयनीं।।

विद्या छोटी या बड़ी हो, तुलसी ने जवाब दिया है। अपने यहां कलश को मंगल कहा है, कुंभ को मंगल कहा है। कलश स्थापन, कुंभ स्थापन इसे मंगलतत्त्व नाम दिया है। 'रामचरित मानस' भी एक मंगलस्थापना है।

एक ओर मंगल। कोई धारणा नहीं थी और अपने घर बुद्धपुरुष आ जाए यह मंगल है। प्रजा के घर राजा आ जाए, यह मंगल है। नौकर के घर सेठ आकर खड़ा रहे यह मंगल है। 'मानस'कार कहते हैं, सेवक के घर स्वामी आकर खड़ा रहे यह मंगल है। प्रमाण -

सेवक सदन स्वामि आगमनू।
मंगल मूल अमंगल दमनू।।

वशिष्ठजी भगवान राम के घर पधारे हैं। दशरथजी ने बिनती की थी कि मैं राम को कल राज देता हूं। मेरी प्रार्थना है कि यह समाचार राम को दीजिए। भगवान के द्वार वशिष्ठजी अचानक पधारते हैं। भगवान रामजी स्वयं मंगलभवन है। यह राम के शब्द है कि हे गुरुदेव, आज मुझे ऐसा लगता है, मेरा बहुत मंगल होने वाला है, क्योंकि सेवक के घर मेरे स्वामी का आगमन हुआ है। आपने अपनी प्रभुता छोड़कर मुझ पर उपकार किया है। आप गुरुपद पर है। आपने तमाम प्रभुता छोड़कर मुझ पर स्नेह किया है। मझे लगता है कि मेरा घर-आंगन आपके आगमन से विशेष पवित्र हुआ है। यह भी एक मंगल है कि कोई ज्येष्ठ, श्रेष्ठ अपने यहां आए। केवल अनुग्रह के कारण आकर खड़े रहे। शास्त्रकार, नीतिकार यों कहते हैं कि इस जगत में जितने जीवात्मा है ये सभी मंगल है, कोई अमंगल नहीं। तुलसीदासजी वर्षाऋतु के वर्णन में ऐसा कहते हैं कि आकाश में से बरसता पानी पवित्र ही होता है। ऐसा प्रदूषणमुक्त कोई जल नहीं परंतु पृथ्वी के संपर्क में आने के बाद गंदा होता है। यों प्रत्येक जीवात्मा मंगल है पर माया के संसर्ग में आते ही अमंगल लगता है।

ईस्वर अंस जीव अबिनासी।
चेतन अमल सहज सुखरासी।

ईश्वर का अंश होने के नाते जीव मंगल है, निर्मल है, अविनाशी है, चेतन है। परंतु अमंगल तब दिखाई देता है -

सो मायाबस भयउ गोसाईं।
बंध्यो कीर मरकट की नाईं।

माया के अधीन होने के कारण हम थोड़े अमंगल दिखाई देते हैं। अत: मंगल तत्त्व का अनादर न करे। क्योंकि जीव मंगल है।

एक वस्तु निश्चित हो गई कि रावण में मद और मोह है। आपसे पूछुं, नारद में मद और मोह है? नारद में है। नारद को काम जीतने का मद है। उन्हें विश्वमोहिनी में मोह जागा है। इस जगत में मद और मोह सब में है। पर ज्यों वर्षाऋतु बह जाय और शरदऋतु में गंदा पानी ठीक हो जाय यों 'संत हृदय जस गत मद मोहा।' यह जो सत्संग है, शरदऋतु है। नहीं तो जगत में मात्राभेद तो

सभी में है। यह मद-मोह अमंगल ही हो तो नारद भी अमंगल ही सिद्ध होते हैं। नारद में तो सभी कषाय आए हैं जिस तरह 'रामचरित मानस' लिखा गया; सभी दुर्गुण आए हैं फिर भी नारद कृष्ण की विभूति है। क्योंकि जब उन्हें मौका मिला तब शरदऋतु का पानी स्वच्छ हो जाय यों नारद का अंत:करण बिल्लोर कांच जैसा हो जाता है।

काम भी मंगल है। क्रोध भी मंगल है। लोभ भी मंगल है। 'रामचरित मानस' में भी कहा है। अच्छा सर्जन कोई करे यह मंगल है या अमंगल? कोई सरस चित्र बनाए उसका चित्रकार मंगल ही लगता है। जिस काम के कारण मानव जैसा उत्तम सर्जन विकसित हुआ उसे आप अमंगल कहेंगे? 'मानस' में लिखा है -

जनम हेतु सब कहँ पितु माता।
करम सुभासुभ देइ बिधाता।।

'मानस' में स्पष्ट लिखा है कि किसी भी व्यक्ति के जन्म का कारण उसके माता-पिता है। तो यह सुंदर रचना है। एक फूल खिलता है उसके कारण में कहीं रसिकता है। एक लता वृक्ष से लिपटती है उसके मूल में भी कहीं रसिकता पड़ी है। यह समस्त सर्जन है जगत का। अत: शंकर ने काम की पुन: स्थापना की। नहीं तो जगत ठप्प हो जाता। जगत में कुछ भी न होता। जगत का विकास रुक जाता। जो श्रेष्ठ कृति करे वह मंगल है। माँ-बाप से संतान पैदा हो वह मानवतन को 'उत्तरकांड' में तुलसी कहते हैं -

बड़ें भाग मानुष तनु पावा।
सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा।।

मानव को देवदुर्लभ देह मिला। उसके द्वारा सर्जन हो यह मंगल है। भगवान राम स्वयं पुष्पवाटिका में कहते हैं कि मेरे मन में यों क्षोभ होता है तो वहां भी काम मंगल है। पर आपके सामने व्याख्या रखी है कि अन्य द्वारा मेरी इच्छाएं पूरी हो ऐसी कामना हमारे यहां मंगल मानी जाती है। निरपेक्ष भाव से काम मंगल है। बुद्ध का शब्द 'सम्यक्' आए तो मंगल है। अतिरेक तो अमंगल है। अत: नीतिकार काम को मंगल कहते हैं।

मुझे किसीने पूछा कि मैं गुरु का ध्यान धरता हूं पर गुरु दिखाई नहीं देते पर समुद्र दिखाई देता है। यह अपना एक अनुभव है। पर मैं थोड़ी स्पष्टता इसलिए करता हूं कि किसी भी बुद्धपुरुष में आपको सागर दिखाई दे तो समझना, यह सामने जो दिखाई देता है वह सागर नहीं है। उसे आप विवेकसागर मानिएगा। आपको अपने बुद्धपुरुष में वृक्ष दिखे यह संभव है। जब गुरु की छबि में वृक्ष दिखाई दे तब यह समझना कि वृक्ष या तो कल्पवृक्ष है; पर यह हमें दूर पड़ता है, तो समझिए कि यह वटवृक्ष है। गुरु में जब पर्वत दिखे तो समझना कि गुरु साक्षात् कैलास है, नीलगिरि है, अपना गिरनार है। किसी को गुरु में नदी के दर्शन हो तो समझना कि सामान्य नदी न होकर गुरु गंगा है, पतितपावनी है, जिसकी गति निरंतर प्रवाह में है।

वायु, पित्त, कफ से यह शरीर समान रहता है। परंतु वायु प्रकोप से शरीर बिगड़ता है। तुलसीदासजी ने कहा है, काम वायु है। वह सम्यक् हो तो शरीर ठीक से चलता है। पर वायु प्रकोप होने पर हमें डोक्टर के पास जाना चाहिए। शास्त्रकार कहते हैं, क्रोध भी मंगल है। क्या 'रामायण' में राम क्रोध नहीं करते? लक्ष्मण क्रोध नहीं करते? भरतजी प्रहार करते हैं। क्या संत चीढ़ते नहीं है? परंतु सम्यक् रहते हैं। भगवान समुद्र पर कोप करे, सुग्रीव पर क्रोध करे। सुग्रीव को सावधान करने के लिए लक्ष्मण क्रोध करते हैं। आखिर प्रयोजन क्या है? शुभ या अशुभ? हमारा क्रोध प्रतिशोध हेतु होता है। अपने क्रोध का नाम अमर्ष है।

'रामायण' में तुलसी यों कहे कि अंगद और सुग्रीव दोनों मिलकर राज करना और सीता की खोज करना। भूलना मत। किसी भी तरह प्रतिशोध और क्रोध नष्ट हो जाय ऐसा करना है तो मुझे इस जीवन में भक्ति की खोज करनी है। जिस दिन यह भूल जायेंगे उस दिन लक्ष्मण क्रोधित होंगे। सो क्रोध भी मंगल है, यदि सम्यक् हो तो। नीतिकार कहते हैं, लोभ भी मंगल है। लोभ का मूल लाभ में है। ज्यों-ज्यों लाभ की मात्रा बढ़े, लोभ शुरू होता है। तुलसी लिखते हैं, 'आठवँ जथा लाभ संतोषा।' यह आठवीं भक्ति है। तो बाप, सम्यक् मात्रा में हो तो सब मंगल है। तो यह जगत मंगलभवन है।

कथा के क्रम में महादेव ने पार्वतीजी के सामने कथा शुरू की है। शिवजी सहज आसन बिछाकर कैलास के वटवृक्ष के नीचे बिराजमान है। मृगचर्म मंगल है। किसी भी वृक्ष का फूल मंगल है। इसका मूल मंगल है। बिल्वपत्र आदि मंगल है। रेशमी वस्त्र और गरम कपड़ें मंगल है। महादेव मंगल कथा आरंभ करते हैं। मंगल आसन पर बिराजमान है। प्रभु को प्रसन्न देख पार्वती ने जिज्ञासा की है, 'हे प्रभु, मेरा अज्ञान दूर करो। मेरी मूढ़ता नष्ट कीजिए। राम की सुंदर कथा सुनाइए।' शिव तो ध्यानरस में डूबे हुए थे। भगवान ने अपने मन में इष्टदेव का स्मरण किया -

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।

अपने इष्टदेव का स्मरण कर हर्षित महादेव ने कहा कि हिमालय पुत्री, आप धन्य है। आपके समान इस जग में कोई उपकारी नहीं है। आप ने पूछी रामकथा कहेंगे, जो सकल लोक को पावन करेगी। ऋषिमुनि, शस्त्र, वेद रामतत्त्व गाते हैं यह वह तत्त्व है जो बिन पैर का चले; बिना किसी पद-प्रतिष्ठा के वे इस जगत में कार्य करते हैं। बिना कान के सुनते हैं। बाह्य इन्द्रियों की आवश्यकता नहीं है, ऐसी अलौकिक करनी है। वह परमतत्त्व राम के साथ जुड़ा है। ऐसे राम का प्राकट्य धरती पर कैसे हुआ? ईश्वर को कार्य-कारण लागू नहीं होता। वह परमतत्त्व सबसे पर है। देवी, राम कारण रहित है तो भी मैं आपको दो-पांच कारण बताता हूं। बैकुंठ के द्वार पर फर्ज बजाते जय-विजय को सनतकुमारों ने शाप दिया सो उन्हें रावण-कुंभकर्ण बनना पड़ा। प्रभु उन्हें मुक्ति देने हेतु प्रकट हुए। दूसरा कारण, सतीवृंदा के पति जलंधर को मारने भगवान विष्णु ने छल किया तो वृंदा ने शाप दिया। तीसरा, नारदजी ने एक बार भगवान को शाप दिया था। प्रभु ने मनुष्य लीला की। चौथा कारण मनु-शतरूपा। इन दोनों ने कठिन तप किया। हमारे घर परमात्मा जैसा पुत्रजन्म ले ऐसी मांग की, तब प्रभु ने

कहा, मेरे समान जगत में कोई है ही नहीं। मैं स्वयं आऊंगा। आखिरी कारण राजा प्रतापभानु। ब्राह्मणों के शाप के कारण वह रावण बनता है। प्रतापभानु रावण और अरिमर्दन कुंभकर्ण बनते हैं। मंत्री धर्मरुचि दूसरी माता से विभीषण के रूप में जन्म लेता है।

रामकथा में रामजी के प्राकट्य से पहले रावण जन्म की कथा आती है। प्रथम निशिचर की कथा कही। फिर सूर्यवंश की कही। तीनों भाईयों ने अगम और दुर्लभ वरदान प्राप्त किए हैं। रावण को वरदान से जो शक्ति प्राप्त होती है तो उसने कुबेर का धनभंडार लूंटकर त्रिकूट कब्जे में लिया। समस्त जगत संत्रस्त है।

पृथ्वी अकुला गई। गाय का रूप धारण कर ऋषिमुनि के पास गई। सभी पितामह ब्रह्मा के पास गए। ब्रह्मा की अगुआई में सभी ने गुहार लगाई। आकाशवाणी हुई, 'डरो मत। मैंने वचन दिया है, मैं अयोध्या में जन्म लूंगा।' मानव को पुरुषार्थ पूरा होने के बाद पुकार-प्रार्थना करना चाहिए। फिर अपनी समस्याओं का निराकरण होगा, ऐसा मत मानिए। प्रतीक्षा कीजिए। फिर चौथा पडाव प्राकट्य, अवतरण। जो साधक पुरुषार्थ नहीं करता, प्रार्थना नहीं करता और दोनों करता है पर प्रतीक्षा करने तैयार नहीं, वह परमतत्त्व के प्राकट्य का अनुभव नहीं कर सकता।

दशरथ राजा को ग्लानि है कि मुझे पुत्र नहीं है। आज राजद्वार, गुरुद्वार की ओर कदम बढ़ाता है। दशरथजी समिध लेकर गए। दु:ख सूखे हुए और सुख ये गीले समिध है। दशरथ ने दु:ख बताया। गुरु ने कहा, आप एक नहीं, चार पुत्रों के पिता बनेंगे। शृंगी ऋषि को बुलाकर पुत्र कामेष्टि यज्ञ किया। भक्तिसहित आहुति दी। यज्ञपुरुष हाथ में प्रसाद की खीर लेकर प्रकट हुए हैं। महाराज वशिष्ठ के हाथ में प्रसाद देते यज्ञपुरुष ने कहा, यह खीर राजा को दीजिए। ये अपनी रानियों को यथायोग्य रीति से दे। राजा ने आधा हिस्सा कौशल्याजी को दिया। एक चौथाई कैकेयी को और एक चौथाई के दो हिस्से कर कैकेयी और कौशल्या के हाथों से सुमित्रा को दिया! तीनों रानियों ने यज्ञप्रसाद धारण किया है। हरि गर्भ में पधारे हैं। रानियों को सगर्भा स्थिति का अनुभव होने लगा है।

भगवान के प्राकट्य का समय निकट है। पंचाग अनुकूल हुआ। चर-अचर हर्षित होने लगे। त्रेतायुग, चैत्रमास, शुक्लपक्ष, नौंवी तिथि, मंगलवार, मध्याह्न का समय, यह हरि प्राकट्य की बेला है। उजाला फैलने लगा है। माँ कौशल्या के भवन में प्रभु प्रकट हुए -

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

माँ अद्‌भुत रूप देखकर अवाक् है। माँ को ज्ञान हुआ। प्रभु हंसे। माँ ने कहा, 'आपने मनुष्यरूप लेकर आने का वचन दिया था पर आप तो नारायण बनकर आए हैं।' भारत की एक माँ हरि को मनुष्य कैसे बना जाए इसका शिक्षण देती है! प्रभु ने दो हाथ धरे। प्रभु छोटे हुए। छोटे-छोटे होते गए। शिशुरूप धारण किया। माँ ने कहा, 'अब शिशु की तरह रोइए।' शिशुरूदन सुनकर सभी रानियां सभ्रम दौड़ी आई! ब्रह्म पधारे, सबको भ्रम हुआ! दशरथजी को बधाई दी, महाराज, आपके यहां, कौशल्या के यहां पुत्रजन्म हुआ है। पुत्रजन्म के समाचार सुनकर दशरथजी परमानंद में डूब गए। गुरुजी को जल्दी बुलाइए। निर्णय हुआ। ब्रह्मतत्त्व आपके यहां पधारे हैं। महाराज दशरथ ब्रह्मानंद में डूबे हैं। राम जन्मोत्सव शुरू होता है। सभी को रामजन्म की बधाई हो।

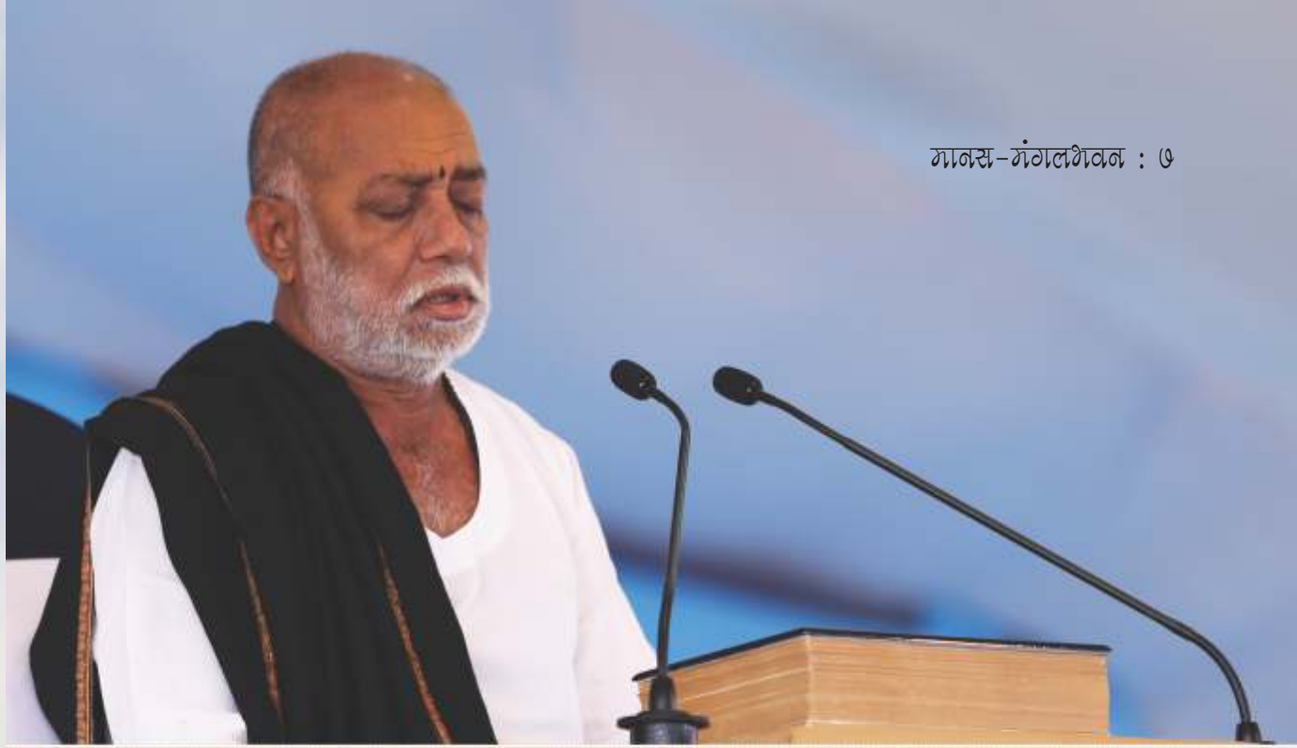

जाप सांप्रदायिक हो सकता है, पर स्मृति बिनसांप्रदायिक होती है

गत संध्या के मंच पर जो सात्त्विक कार्यक्रम प्रस्तुत हुआ, तो सभी भाईयों और बहनों को धन्यवाद। मैं प्रसन्न हुआ। सत्त्वगुण को टिकाए रखना बहुत कठिन है। रजस् की रज दूषित करने तैयार रहती है; तमस् उछलकूद करता है! कल के मंच की सात्त्विकता बरकरार रही। साधुवाद।

दूसरी प्रसन्नता, कच्छ के इस्लाम धर्म द्वारा अल्ला की बंदगी करते हमारे मुस्लिम समाज के अगुआ आये। उन्होंने व्यासपीठ प्रति अपना आदर व्यक्त किया। इन सबको और न आ सके हो उन सबको भी व्यासपीठ से सलाम, बहुत शुक्रिया। आओ, हम मिलकर रणेश्वर को सेतु बनाए। व्यक्ति-व्यक्ति, समाज-समाज, धर्म-धर्म इन सबको त्रेतायुग में सेतु की जरूरत थी ही। पर अभी इस काल में जितनी जरूरत है, उतनी तो उस काल में भी नहीं रही होगी। अत: हर एक धर्म के भाई-बहन आते ही रहते हैं। क्योंकि यह मेरी धर्मसभा नहीं है, यह मेरी प्रेमसभा है। मैंने हंमेशा रामकथा को प्रेमयज्ञ कहा है। मैं प्रसन्नता से स्वागत करता हूं।

मुझे आपके साथ पांच मंगल की चर्चा करनी है। ऋषि कहे, सत्य मंगल है। परंतु मात्राभेद से असत्य भी मंगल है। हद है! समझने के लिए बुद्धि को भी प्रज्ञा होना पड़ता है। इस सूत्र को समझने के लिए बुद्धि को अमीर बनना होगा, हृदय को गरीब होना पड़ेगा। दलित समाज या तो भिक्षित कई बार ऐसा बोलते हैं कि हम यों अमीर नहीं पर दिल के बहुत अमीर है। इनका स्वागत है। आदमी दिल का अमीर हो यह अच्छा है; परंतु सूत्र अमल मुश्किल है। जो अमीर हो

वह उदार हो ऐसा सूत्र नहीं गूंथना है, बाप! नहीं तो दुनिया में काफी अमीर होते हैं, फिर भी उदारता का अकाल है। प्राय: जो गरीब होते हैं, मेरी दृष्टि से उदार होते ही है।

गरीबी की एक खुश्बू होती है। चित्रकूट में बगदाणा के बाजू से एक मोची आया था। पैर नंगे; अस्सी की आयु। फटी कमीज़, घुटने तक की धोती, हाथ में लकड़ी, ओर कुछ नहीं। वह मुझसे मिलता है। हम थोड़े ही लोग बैठे थे। मैंने उसे बुलाया, 'दादा, आईए, बैठिए। कौन-सा गांव?' साहब, मैंने कहा, 'मुझे आपकी सेवा करनी है। मैं क्या करूं?' कहा, 'बापू, कुछ नहीं, कुछ नहीं माने कुछ नहीं। बस, कभी-कभी आता हूं, खाता हूं और चला जाता हूं। मुझे क्या चाहिए?' ऐसी अमीरी किसी भी दुकान पर नहीं मिलती। यह कोठी से नहीं, भीतर से आती है। हृदय के गरीब रहिए। गरीब ही उदार होते हैं। भक्ति करनी हो तो गरीब रहिए। हृदय को हंमेशा गरीब रखिए। 'दिलवाले दुल्हनियां ले जायेंगे।' दुल्हन माने भक्ति। 'भागवत' को लीजिए। उसमें ज्ञान, वैराग्य उसकी बूढ़ी संतान है; परमभक्ति नवसुंदरी है। उसे कौन ले जायगा? दिमागवाले नहीं, उसे तो दिलवाले ले जायेंगे। दिल बहुत गरीब है। यह आपके जीवन का सत्य बने तब स्वीकार करना।

जिन्होंने ये सूत्र दिए हैं ये दिमाग के समृद्ध महापुरुष हैं, प्रज्ञा पुरुष हैं। बुद्धि ने प्रज्ञा के महल में ओलरेडी प्रवेश कर लिया है, ऐसे संतों के सूत्र है। 'मंगलम् सत्यम्।' सत्य मंगल है, यह सर्व स्वीकार्य है। क्या सत्य कभी अमंगल हो सकता है? पर ऋषि प्रज्ञा के लेवल पर बोल रहे हैं। उस स्तर से असत्य भी मंगल है। गजब है! यहां सूत्रपात है, शस्त्रपात नहीं।

रण का एक नाम है समर। समरांगण भी कहते हैं, समर को; वहां शस्त्रसंपात है। वहां परस्पर शस्त्र को काटने की एक स्पर्धा है। यह समर का लक्षण है। समर शस्त्रसंपात की स्पर्धा का नाम है। पर स्मरण-स्मृति में स्पर्धा नहीं है। एक वस्तु स्पष्ट है कि जाप की सीमा पूरी हो जाय फिर स्मरण शुरू होता है। जप सांप्रदायिक भी कभी हो सकता है। परंतु स्मृति बिनसांप्रदायिक होती है। कृष्ण जब 'गीता' में कहते हैं, 'यज्ञानां जपयज्ञोस्मि।' तब जप सामान्य यज्ञ मत समझिए। कृष्ण ने ज्ञान को भी यज्ञ कहा। और जप को भी यज्ञ कहा। यज्ञ में जो तिल, घी, कुंड ना हो तो भी चले; तीन- चार पथ्थर रख दीजिए तो भी चले; मंत्र हो तो भी चले; विधि न हो तो भी चले। पर जो वस्तु चाहिए वह अग्नि है। अग्नि का कार्य है काष्ट को जलाकर स्वयं को भी समाप्त कर देना। बहुत जाप करने के बाद की अवस्था 'स्मृतिर्लब्धा' है। नंद के शब्द 'इति संस्मृत्य, संस्मृत्य, संस्मृत्य', यह जपयज्ञ है। जिसे मोडर्न भक्ति गीत में, मोडर्न गीत में मेरी व्यासपीठ गाती है -

लो आ गई उनकी याद, वो नहीं आये...

यह स्मृति है। जप की सीमा आ गई। गिनती मिट गई, अगणित का प्रदेश शुरू हुआ। माला के मनके गिने जाये, आंसू नहीं गिने जाते। स्मृति भी नहीं गिनी जाती। इसीलिए शायद कबीर साहब ने माला के मनके की उपेक्षा नहीं की है! कभी-कभी बुद्धपुरुष को हम नहीं समझ पाते।

उस दिन मुझे किसी ने सूतक की बात पूछी तो मैंने कहा, सूतक जरूरी नहीं है, आप हरिनाम लीजिए। यह व्यक्तिगत है। यदि आपको ठीक लगे तो कीजिए पर मुझे तो किसी ने लिखकर दिया है कि बापू, कथा सुनने के बाद सूतक का अर्थ हम 'सु-तक, अच्छा मिला हुआ मौका', ऐसा करने लगे हैं। हरि भज लेना है। जिसने ऐसा अर्थ निकाला है, मैं उसे प्रणाम करता हूं। शोक अंधकार है। जहां अंधकार हो वहां दीये की जरूरत होती है। जिस दिन शोकग्रस्त हो, हरिनाम लेना है। कर्मकांड अपनी जगह पर है; इसमें जिसे आस्था हो उसे मुबारक हो।

तो, उस स्मरण प्रदेश का हिसाब कौन गिनने जाय? समर में तो एक-दूसरे के शास्त्र काटने होते हैं; स्मरण में तो सूत्रपात है; अश्रुपात है।

'लो आ गई उनकी याद, वो नहीं आये ...'

कृष्ण नहीं चाहिए, स्मरण चाहिए। वे तो आकर चले भी जाय! स्मरण बिनसांप्रदायिक है। अत: मेरी दृष्टि से यह कीर्तन है। मैं कथा में अमुक गीत न गाऊं तो टी.वी. पर देखनेवाले हमारे कुछेक महात्मा मुझे फोन करे कि बापू, कथा में वो गीत नहीं आया! वे उसी गीत की राह देखते हैं! तो साधुओं को बिगाड़ने का धंधा शुरू किया है! दूध में छाछ डाले तो मूढ़ दुनिया यह कहे, दूध बिगड़ गया! कबीर को पूछे तो कहे, मक्खन होने की प्रक्रिया शुरू हुई। काशीवाले कहते थे, कबीरा बिगड़ गया! स्वामी रामतीर्थ का प्रसिद्ध शे'र है

इन बिगड़े दिमागों में भरे अमृत के लच्छे हैं।
हमें पागल ही रहने दो, हम पागल ही अच्छे हैं।

जिगर मुरादाबादी का शे'र है -

हम कभी आयेंगे नहीं वाइज़ तेरे बुतखाने में,
क्योंकि इस मयखाने की मिट्टी इस मयखाने में।

मेरे श्रावक भाई-बहन, जप बहुत अच्छा है; बहुत करने पड़ते हैं। अमुक व्यवस्था के रूप में वक्ता आए। व्यास, तुलसी, सुर, कबीर, याज्ञवल्क्य शंकर ये सब जीभ से नहीं बोलते थे। उनकी जीभ नहीं, जप बोलते थे। जप स्मरण में तबदील हो गए थे। तुलसीदास क्या बोलते हैं? हनुमानजी ने यों कहा कि जगत में सब से बड़ी विपत्ति यह है कि जब तक स्मरण न हो और स्मरण के बाद भजन न बने तब तक बड़ी विपत्ति है। तुलसी -

कह हनुमंत बिपति प्रभु सोइ।
जब तव सुमिरन भजन न होइ।।
रामहि सुमिरिअ गाइअ राम।
संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि।।

तो, प्रेमपंथ के कुछेक महात्मा तो मुझे तुरंत फोन करे कि बापू, इस बार वो गीत क्यों नहीं आया? अब भेद क्यों? अस्पृश्यता क्यों? प्रेम से गाइए।

लो आ गई उनकी याद, वो नहीं आये...

स्मृति-स्मरण एक ऐसे प्रदेश का नाम है, जहां मनके गिनने का बंद हो जाय; जहां केवल बौद्धिक व्यायाम और एक-दूसरे के विचार काटने की बात नहीं आती। ऋषि जब ऐसी स्थिति में प्रवेश करते हैं तब यह देखते हैं। 'मंगलम् सत्य। भेदेन अनृतं अपि।' थोड़ी-सी मात्राभेद के साथ अनृत भी मंगल है।

'महाभारत' में हताश और निराश हुए धर्मपुरुष युधिष्ठिर अपनी शिबिर में बैठे हैं। कृष्ण-अर्जुन मिलने जाते हैं। युधिष्ठिर, अर्जुन नाराज और निराश है। युधिष्ठिर को लगता है, मैं थोड़ा-सा गलत भी हूं। अब गुस्सा प्रकट होता है। मैंने पहले भी कहा था, किसी में दोष देखकर आप गुस्सा करे यह ठीक तो नहीं पर क्षम्य जरूर है। उसमें दोष है और हमने क्रोध किया पर क्रोध के कारण आपको सबमें दोष दिखे यह कहां तक ठीक है? यह तो द्वेष का परिणाम है कि सबमें हमें विरोध ही दीखे! युधिष्ठिर के मन में कुछ ऐसा चल रहा है। धर्मराज, अर्जुन

की ओर देखकर नाराजगी से कहते हैं, 'गांडीव फेंक दो। कर्ण खूंखार बना है और तुम कुछ भी न कर पाए!' ये शब्द बोले हैं। अर्जुन का नियम था कि मेरे गांडीव को कोई अपशब्द कहेगा, चाहे वह कोई भी हो, मैं उसे मार डालूंगा। तलवार निकालकर शिरोच्छेद करने तैयार हो जाता है। कृष्ण उसे रोकते हैं। कहता है, 'मेरी प्रतिज्ञा है।' कृष्ण कहते हैं, 'जिस सत्य के बोलने से खराब होनेवाला हो ऐसा सत्य ना बोलना और जिस असत्य के बोलने से शुभ परिणाम आनेवाला हो ऐसा थोड़ा असत्य बोल लेना चाहिए।' मैं इस में सम्मत नहीं हूं। किसी भी तरह सत्य का जतन करने की कोशिश करनी चाहिए। ये 'महाभारत' के कृष्ण के शब्द है। जो सत्य अंत में सबके लिए अमंगल का निर्माण करे ऐसा सत्य नहीं बोलना चाहिए। असत्य बोलने से परिणाम शुभ हो तो ऐसा असत्य बोलना चाहिए। वह अनृत अच्छा है। सभी सहमत हो यह जरूर नहीं। पर व्यवहार और नीति जगत में यह उचित लगता है। भगवान कृष्ण को कौन समझ सकता है? किनारे पर रहकर छपाकछई करनेवाले हम क्या जाने कि समुद्र के मध्य भीतर में कैसे-कैसे मोती भरे पड़े हैं?

परिचय छे मंदिरमां देवोने मारो,
अने मस्जिदोमां खुदा ओळखे छे,
नथी मारुं व्यक्तित्व छानुं कोईथी,
तमारा प्रतापे बधां ओळखे छे.

- शून्य पालनपुरी

'कृष्णं वंदे जगद्गुरुं', उनके नकशे कदम पर चले, तो भी काफी है। उनकी सत्य-असत्य की परिभाषा ही अलग है। हरीन्द्रभाई तो कहते थे कि कृष्ण सत्य बोलते हैं या असत्य, यह सोचना ही नहीं। वे जो बोलते हैं वही सत्य है। इसमें क्या आलोचना हो? क्योंकि वह परम सत्य है। उसकी व्याख्या अलौकिक है। वे अर्जुन को समझाते हैं, शस्त्र से शिरोच्छेद करना ऐसा नहीं; तुम्हें अपने सत्य का पालन करना हो तो हमसे जो बड़े हैं, सबकी उपस्थिति में उनका अपमान कर देना वह हत्या के बराबर है। कृष्ण ने ऐसा मध्यममार्ग निकाला।

तो बाप, सत्य मंगल है। पर थोड़ी मात्रा में असत्य भी मंगल होता है। देशकालानुसार कभी मंगल बनता है। किसी की जिंदगी बचती हो तो असत्य भी मंगल है। पर मुझे ऐसा लगता है कि क्या सत्य निर्बल होता है? सत्य न बचा सके? अपनी श्रद्धा और निष्ठा नहीं डिगनी चाहिए। नीति की एक भूमिका है। आपकी शरण में कोई आया हो तो फिर 'नयन बिन बानी', इस सूत्र का उपयोग करना। 'गिरा अनयन नयन बिन बानी।' 'मानस' में तो ऐसा लिखा है कि -

नहीं असत्य सम पातक पुंजा।
गिरी सम होय कोटीक गुंजा।।

ध्यान देना, मैं आपके साथ चर्चा करता हूं। यह अपना वार्तालाप है। ये सभी मुद्दे विचारणीय है। रामकथा न्यायालय नहीं, औषधालय है। जैसी हमारी बीमारी ऐसी एक औषधि ढूंढने की हमारी कोशिश है। हां, तुलसी इज़ाज़त देते हैं। उन्होंने तो ऐसा भी कहा है, चाहे आपके पापों का ढेर लगा हो, चाहे आपके कितने ही असत्य इकठ्ठे हुए हो, तो भी चिन्ता न करे। रामनाम बोलेंगे तो पाप का पूरा ढेर जलकर भस्म हो जायगा। झडबेरी चाहे कितनी ही इकठ्ठी करे तो भी गिरनार नहीं हो सकती, यों चाहे कितने छोटे-बड़े पाप इकठ्ठे करे तो भी सत्य जैसे पर्वत नहीं होते। उबासी लेते-लेते भी रामनाम बोलिए

तो पापपुंज जल जायगा। यूं रास्ता निकलता है। धर्म परममंगल है। कभी बहुत कम मात्रा में परमतत्त्वों ने किया अधर्म भी मंगल है।

भगवान विष्णु तो परममंगल है। वृंदा के सतीत्व का विष्णु ने छलकर भंग किया क्योंकि समाज का इतना बड़ा कार्य करना था, वह स्पष्टीकरण के लिए। संतों से सुना है कि कवचधारी को मारना हो तो पहले उसका बख्तर काटिए। समाज में कई आदमी धर्म का बख्तर पहनकर अधर्म का आचरण करे तब उस धर्म के बख्तर को काटना पड़ेगा। क्योंकि छिपा हुआ अधर्म तो ही नष्ट होता है। जो आदर्श धर्म के बख्तर को नष्ट करेगा उस पर आरोप लगेगा कि अधर्म का आचरण हुआ है, छल हुआ है। विष्णु को लांछन लगा। 'रामायण' में राम कहते हैं, 'मोहि कपट छल छिद्र न भावा।'

बहुत कम मात्रा में अधर्म भी कभी मंगल बनता है। सतीवृंदा का व्रत ठाकुर ने न तोड़ा होता। वृंदा शाप देने के बाद रोने लगी तब भगवान नारायण ने कहा कि 'वृंदा, यह मुझे जगत के लिए करना पड़ा। पर तुझे ऐसा लगे कि मैंने अधर्म का आचरण किया है तो मुझे दंड दे।' कहने लगी, 'अब मुझे कौन अपनायेगा? आपने जालंधर बनकर मेरा व्रतभंग किया। आपने सती स्त्री के साथ फरेब किया। कौन मेरा स्वीकार करेगा?' तब भगवान ने कहा कि 'अगले जन्म में वृंदा, तू तुलसी बनेगी, मैं शालिग्राम बनूंगा। सबसे पहले हम दोनों का ब्याह होगा। मैं तेरा स्वीकार करूंगा।' तब से हमने यह तुलसीविवाह शुरू किया है। वृंदा के नाम से प्रेमवन का सर्जन हुआ। इसका नाम है ब्रजभूमि में श्री वृन्दावन।

सब तरह से संभव हो देश, बोर्डर, सरकार, आसपास की बस्ती, धर्म और किसी को आपत्ति न हो, तकलीफ़ न हो, कानून के मुताबिक हो, संविधान अनुसार हो, नीति कुंठित न होती हो, सत्य संरक्षित रहे तो हम यहां छोटा-सा रणेश्वर महादेव का मंदिर न बना सके? पर सारी चीजों का ध्यान रखना। देश और सरहद को नुक्सान हो ऐसा कुछ नहीं करना है। सर्वसहमति से हो तो ठीक और न हो तो इच्छा को मीठी कर लेना। जाओ, नहीं खेलते! ध्यान देना, सर्वसंमति हो तो ही। कहीं पर मोरारिबापू के नाम का इस्तेमाल मत करना। यहां की जनता ने कहा है, कथा पूरी होने पर कोई स्मृति खड़ी करे। पर यह सब आप पर निर्भर है। पर इससे पहले पास के दो गांवों में शौचालय बनाइए। देश में स्वच्छता अभियान चल रहा है। जो घर शौचालय के लिए तैयार हो, पानी की व्यवस्था हो तो पहले यह काम कीजिए। फिर सब राजी हो तो रणेश्वर निर्माण।

उज्जैन के महाकाल के मंदिर में शिवभक्त कागभुशुंडिजी शिवनाम के जाप करते थे तब गुरु पधारे। 'उठि नहिं कीन्ह प्रनाम।' खड़े होकर गुरु को प्रणाम नहीं किए। गुरु तो सम्यक् बोध थे। उन्होंने आश्रित का अपराध ध्यान में नहीं लिया। शास्त्रों का नियम है कि मंदिर में देवपूजा करते हो, परंतु उसी समय गुरु आ जाय तो देवपूजा की बची हुई सामग्री गुरुपूजा में इस्तेमाल कर सकते हैं।

बलिहारी गुरुदेव की जिन्होंने गोविंद दियो बताइ।

कागभुशुंडि ने भूल की। स्वयं जप करते थे। महादेव की अद्भुत भक्ति! पर गुरु का अपमान हुआ। सम्यक् बोध था ऐसे बुद्धपुरुष तो अपमान सहन कर गए। पर भूतनाथ सहन न कर सके। अब इसे दंड न दूं तो मेरा श्रुतिमार्ग भ्रष्ट होगा। तेरे गुरु का तूने अपमान किया! फिर मंदिर में आकाशवाणी हुई। कागभुशुंडिजी को शाप

दिया। फिर कांपने लगा। गरीब स्वभाव का विप्र साधु ब्राह्मण! अपने आश्रित को महादेव ने शाप दिया। सहन नहीं हुआ। 'हे भोलेनाथ, हे बाप, इस पर ऐसा गुस्सा मत कीजिए। यह जीव है, यह मेरा है।' किसी के चरण पकड़े होंगे तो काम में आयेंगे। महादेव को कहा, इस पर कृपा कर। मेरा आश्रित है। उसने भूल की है। फिर महादेव को प्रसन्न करने के लिए भुशुंडि के शाप का निवारण करने हेतु इस सद्गुरु ने स्तुति गाई वो रुद्राष्टक है।

नमामीशमीशान निर्वाणरूपं।
विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपं।
निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं।
चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहं।

तो बाप, संभव रहा तो करेंगे छोटा-सा नाजुक रणेश्वर मंदिर। नहीं तो एक सूत्र है, प्रत्याहार करना।

राम परममंगल है। पर रावण कई बड़ी मात्रा में मंगल है। रावण मंगल न होता तो मंगलभवन में समाविष्ट न होता। वह निशिचरवंशी था। पर भीतरी उजाला भी काफी था। भगवान कृष्ण भी परममंगल है। पर मेरी व्यक्तिगत मान्यता में कर्ण बहुत बड़ी मात्रा में मंगल है। कंस भी मंगल तो है ही पर कम मात्रा में मंगल है। प्रत्येक के जीवन में दबा हुआ कंस होता है! सद्गुरु की कृपा से उनका अनावरण होता है। सो, बुरे से बुरे आदमी में भी कहीं मंगल तत्त्व छिपा हुआ होता है। जिन्हें हम बहुत महान मानते हैं उनमें भी कहीं अमंगल तत्त्व मात्राभेद के हिसाब से छिपा हुआ होता है। क्योंकि 'बिधि प्रपंच गुन अवगुन साना।'

मूल बात कह दूं, साहब! यह सब बोलना तो प्रभु की कृपा और आप सबका भाव है तो बोलते रहते हैं। बाकी आखिरी सार तो एक ही है, हरिनाम। 'यही मन रघुपति नाम उदारा।' तुलसी ने पूरा 'रामचरित मानस' रच डाला तो किसी ने पूछा, संक्षेप में यह बताइए कि इसमें क्या है? तब कहा, इसमें हरिनाम है। तो हरिनाम आखिरी निर्णय है। तुलसी ने कहा, मेरे शास्त्र में नाम है। अतिशय पवित्र और वेदपुराण का सार है। उसका आखिरी निचोड़, आखिरी अर्क हरिनाम है। चैतन्य गौरांग महाप्रभु ने अपनी इतनी बड़ी संपदा की विद्या पानी में बहा दी और केवल रखा हरिनाम। जगत को कह दिया, बिना हरिनाम की विद्या विधवा है।

जब चैतन्य जगन्नाथपुरी का नीलवर्ण समुद्र देखकर मानते थे कि यह नीलवर्ण तो मेरे हरि का है तब श्रद्धावश सागर में चले जाते थे। बेहोश चैतन्य को मछुहारे वापिस ले आते थे। जगत मंदिर के खंभे को कभी आलिंगन देते थे तब श्रद्धा जगत का कहना है, खंभे पर चैतन्य की अंगूलियों के निशान पड़ जाते थे।

कथा के क्रम में, भगवान राम का जन्मोत्सव मनाया गया है। कैकेयी ने भी पुत्र जन्म दिया है। सुमित्रा ने दो पुत्रों को जन्म दिया है। अयोध्या चार पुत्रों को पाकर कृतकृत्य बनी है। एक माह दिन रहा, रात हुई ही नहीं। संतों ने अर्थ निकाला, जीवन में राम का प्राकट्य हो फिर माया-ममता की रात होती ही नहीं। फिर तो विवेक का उजाला ही होगा। चारों भाईयों का नाम संस्करण हुआ है। विश्व को आराम देनेवाले यह नाम तत्त्वत: महामंत्र है अत: कौशल्या नंदन का नाम वशिष्ठजी राम रखते हैं। समस्त जगत को प्रेम से भर देगा, अत: कैकेयीपुत्र का नाम भरत रखा। जिसके स्मरण से दुश्मनी का नाश होगा उसका नाम शत्रुघ्न और राम प्रिय ऐसे सुमित्रा पुत्र का नाम लक्षण के भंडार ऐसे उनका नाम लक्ष्मण रखा। फिर विद्याप्राप्ति के लिए वशिष्ठजी के द्वार

गए हैं। अल्पकाल में विद्या प्राप्त की। जीवन में आचरण में करते हैं। समय बीतता जाता है। विश्वामित्र महाराज तपस्या करते हैं। यज्ञयाग करते हैं पर आसुरी तत्त्व विघ्न डालते हैं। विश्वामित्र यज्ञ की सफलता के लिए राम का साथ मांगने अयोध्या आते हैं।

विश्वामित्र अवध आए। स्वागत हुआ। कहा, 'राजन्, आपके यहां चार पुत्रों की यज्ञप्रसादी है। तो यज्ञ रक्षा हेतु दो पुत्र देना यह क्षत्रियधर्म है। मैं संपत्ति नहीं, संतति मागने आया हूं।' दशरथजी को पुत्र ममता के कारण मन नहीं मानता। स्नेह में भी एक जड़ता होती है। बड़ों को छोटों की ओर ममता है उसे स्नेह कहते हैं। छोटों को बड़ों की ओर हो उसे भक्ति कहते हैं और समवयस्कों में जो है उसे प्रेम कहते हैं। वशिष्ठजी के कहने से राजा, राम-लक्ष्मण को इजाजत देते हैं। आशीर्वाद लेकर निकलते हैं। पुरुषों में सिंह जैसे दो वीर, दूसरों के भय को हरने के लिए विश्वमंगल हेतु विश्वामित्र के साथ जाते हैं। अवतारकार्य का श्रीगणेश होता है। रास्ते में ताडका क्रोधित होकर आती है। राक्षसों को मारने से पहले राक्षस को जन्म देनेवाली वृत्ति का निर्वाण किया है। ताड़का को निर्वाण दिया। मुनि को पूर्ण विश्वास हुआ कि यह ब्रह्म है। आश्रम में मारीच को शतजोजन दूर फेंक दिया। बिना धार का बाण मारकर सुबाहु को अग्निबाण से निर्वाण दिया है।

थोड़े दिनों के बाद विश्वामित्र एक प्रतीक्षायज्ञ अहिल्या का और दूसरा धनुषयज्ञ पूर्ण करने का राघव से कहते हैं। गुरु की बात सुनकर हर्षित हो पदयात्रा का आरंभ करते हैं। रास्ते में अहिल्या का उद्धार कर गंगास्नान कर जनकपुर पहुंचते हैं। जनकजी विश्वामित्र का स्वागत करने आये हैं। विदेह को हुआ कि यह कौन है? हमें इतने प्रिय क्यों लगते हैं? ऋषि कहते हैं, सबको प्रिय लगे ऐसे परमतत्त्व है। ऋषि के आगे जनकजी अपनी चैतसिक दशा का वर्णन करते हैं। महामुनि ने प्राकृत परिचय दिया। अयोध्या में 'सुंदर सदन' जगह रहने के लिए दी।

गरीबी की एक खुश्बू होती है। गरीबी की एक सुगंध होती है। चित्रकूट के पास के बगदाणा से, मोची आया था। पांव नंगे थे। अस्सी की उम्र, फटी कमीज, घूटने तक धोती, हाथ में लकड़ी, ओर कुछ नहीं। मैंने नजदीक बुलाया, 'दादा, आईए, बैठिए, कौन-सा गांव? मैं कहकर थका कि 'मुझे आपकी सेवा करनी है। मैं क्या करूं?' कहा, 'कुछ नहीं। कुछ भी नहीं। बस कभी-कभी आता हूं। भोजन करता हूं फिर चला जाता हूं। मुझे क्या चाहिए?' यह अमीरात किसी भी दुकान पर नहीं मिलती। कोठी से नहीं, कोठे में से आती है। दिल के गरीब रहिए। गरीब ही उदार होते हैं। भक्ति करनी है तो गरीब, रंक होकर रहिए। हृदय को हंमेशा गरीब रखिए, दिल को रंक रखिए।

‘रामचरित मानस’ प्रेमशास्त्र है, प्रेमसूत्र का संग्रह है

बाप, नौ दिवसीय रामकथा के आठवें दिन के प्रारंभ में एक बार कथा में उपस्थित सभी पूजनीयों को मेरे प्रणाम। समाज के सभी अग्रणी महानुभावों, कला और विद्या के उपासकों, श्रवण करते भाई-बहनों तथा अन्य सभी को व्यासपीठ से मेरे प्रणाम। कथा के आरंभ में दो खुशी व्यक्त करूं। कल हरिहरन और उनकी टीम ने एक कार्यक्रम प्रस्तुत किया इसकी खुशी है। हर जगह आयोजित रामकथा का सार अंशरूप ‘रामकथा’ नामक एक सारदोहन श्रोताओं को और किसीको भी प्रसादरूप में दिया जाता है; उसी क्रम में दो रामकथा ‘मानस-मीरां’ चित्तौड़ और ‘मानस-बोधगया’ उसका सार पुस्तक रूप व्यासपीठ पर से आप सबको समर्पित हुआ। परमस्नेही नीतिनभाई और उसकी समग्र टीम को साधुवाद।

अब समस्त जगत मंगलमय है, क्योंकि ब्रह्ममय है। ब्रह्ममय होने के कारण कहीं अमंगल दिखाई दे पर तत्त्वत: यह भी मूल में मंगल ही है। मात्राभेद से थोड़ा हो क्योंकि विधि-प्रपंच गुण-अवगुण युक्त है। हमें हंसदृष्टि रखकर नीर-क्षीर अलग करने होते हैं। हम इसके लिए प्रसन्नतापूर्वक मथते हैं।

कृष्णमूर्ति कहते थे कि आप प्रवास के लिए जब बेग तैयार करे तब जब पहली जोड़ी कपड़ों की आप रखते हैं और अंत में आखिरी जोडी रखते हैं; और जब आप बेग फिर से खोलते है तब आखिरी जोड़ी पहले और पहली जोड़ी आखिर में निकले उसी तरह जीवन की बेग का भी शायद यही नियम है कि अपने अज्ञात चित्त में बुद्धपुरुष की कृपा से

सर्वप्रथम रखा हो वह कभी-कभी प्रसाद के कारण स्मृति में छलकता है; ज्यों अर्जुन को सातसौ श्लोक तक स्मृति दबी थी उस प्रसाद के कारण स्मृति आती है, ऐसा कुछ अनुभव में आता है। इस मंगलभवन की चर्चा चलती है इसलिए मेरी स्मृति में चमक आती है।

कल रात यज्ञ के पास बैठा था तब स्मृति ताजी हुई। मेरे सद्गुरु भगवानदादा त्रिभुवनदास दादा के चरण में बैठकर मैं रामकथा समझ रहा था। वे मुझे एक-एक चौपाई देते थे, अब याद आ रहा है कि वे बहुत सरलता से समझाते थे। इसमें भगवान मंगलभवन है, उसकी जब चर्चा होती थी, तब स्मृति होती है कि उन्होंने ‘मंगल’ शब्द के एक-एक अक्षर का अर्थ किया था ग्राम्यचित्त से। मुझे लगता है, ग्राम्यचित्त बहुत बड़ा काम करता है।

मुझे ऐसा लगता है, लकडी-काष्ट घिसते, चकमक रिगड़ते जब पहला अग्नि खोजा गया होगा और उसको हमने देव माना यह बपौती ग्राम्यचित्त की है। जब अग्नि पहलीबार प्रकट हुआ, चिनगारी भड़की तब लोग बहुत नाचते हैं, उत्सव मनाते हैं। पहलीबार इतना बड़ा चमत्कार हुआ तब अवश्य एक उत्सव हुआ होगा। आज यह अग्नि घरघर में उपलब्ध है। दियासलाई की डिबियां में कैद है। पर हम नाचते नहीं है। न तो उत्सव मनाते हैं, न तो कीर्तन करते हैं। क्योंकि वह अग्नि देवता अपनी मुठ्ठी में आ गया है। यह चमक तो सर्वप्रथम निर्दोष पूर्णत: असंग ऐसे ग्राम्यचित्त में से प्रकट वस्तु थी। अपना शब्द कहूं तो कोठासूझ में से प्राकट्य हुआ है।

तो उस समय ‘मंगल’ शब्द का एक-एक अक्षर मुझे बताया गया। आज मैं उसी रूप में प्रस्तुत करूंगा। उस समय यह बात प्रसाद के रूप में प्रस्तुत हुई थी। ‘म’ उपर अनुस्वार ‘मं’, है उसका अर्थ दादा ने दिया था मंत्र। कौन-सा मंत्र? ‘ॐ नमो भगवते वासुदेवाय’, ‘ॐ नम: शिवाय’, ‘श्री कृष्ण: शरणं ममं’, ‘राम रामाय नम:’, गायत्री मंत्र, कोई बौद्ध मंत्र, ‘नमो अरिहंताणं’, ‘एक ॐकार सतनाम’, कौन-सा मंत्र? मंत्र की व्याख्या नहीं है। ‘मंत्र’ शब्द बहुत पवित्र है। यह हमें गरबडी में भी डाल देता है। देहाती चित्त में अपने यहां साबर मंत्र पैदा हुए। जिसका उल्लेख ‘मानस’ में है। इसका आदि सर्जक शिव है। साबरमंत्र का एक पूरा वृक्ष। भगवान शंकर देहाती चित्त है, लोकनायक है।

ग्राम्यचित्त, उसमें प्रास का कोई ठिकाना नहीं, अर्थ भी न निकले; केवल श्रद्धा से पकड़ ले। फिर धीरे-धीरे ये साबर मंत्र छंद में आए। थोड़े सुसंस्कृत हुए। अत: यहां स्पष्टता नहीं है कि ‘म’ के ऊपर अनुस्वार माने कौन-सा मंत्र? मंत्र का एक अर्थ सुविचार है; सच्चा विचार। इस पर से सभ्य समाज में शब्द बना, ‘मंत्रणा।’ दो-पांच एकत्र होकर अच्छा और सच्चा विचार याद करे उसकी डीबेट, चर्चा हो उसमें से ‘मंत्रणा’ शब्द आया।

मंत्र माने विचार। पर विचार तो संकुचित भी हो सकता है, उदार भी हो सकता है। कुछेक आदमियों के विचार बेहद संकीर्ण होते हैं। वे कूपमंडूक हैं। उनका एक निश्चित कुंआ है। उसमें मेढ़क कूदे तो समुद्रवाले कहे, तेरा समुद्र इतना ही है!

पृथ्वी तणो पींडो कर्यो रज लावतो क्यांथी हशे?
अने जगचाक फेरवनार ए कुंभार बेठो क्यां हशे?

जो एकदम संकीर्णता लेकर समाज को बांधे कि यही ठीक है, उसे मंत्र का दर्जा दे सकते हैं? बाद का ‘ग’ है। ग माने गगन। विचार संकीर्ण नहीं होना चाहिए पर गगन जितना विशाल होना चाहिए, आकाश जितना विस्तृत होना चाहिए। हमें ‘रामायण’ क्यों पसंद है?

आकाश अभी हट्टाकट्टा खड़ा है। विशालता ये शाश्वतता का पर्याय है। मानव जितना विशाल उतना अमर है। मंत्र माने विचार। 'ग' माने गगन। आकाश सर्वकालीन है। आकाश को आप ऐसा नहीं कह सकतें कि यह त्रेतायुग का आकाश है, यह द्वापर का आकाश है। विशालता काल के बंधन से पर होती है। स्थल के बंधन से पर होती है। गुण के बंधन से पर होती है। इन सभी से यह अतीत होती है। यह तत्त्व मंगल है। जिसके पास आकाश जैसा विशाल विचार है, परंतु केवल विचार ही आकाश जैसा हो इससे क्या? परिणाम क्या? तब दादा ने मुझ से कहा था, बेटा, 'ल' का अर्थ लक्ष्य है। जो विशाल विचार तुम्हें लक्ष्य तक पहुंचाए उस घटना को मंगल मानना। चाहे वह गीत का टुकड़ा तुम्हें लक्ष्य तक पहुंचाए तो उसे मंगल मानना। पूज्य विवेकानंदजी का प्रिय मंत्र 'उतिष्ठत लक्षवेधन'; वह घूमाती मछली है। पानी में मछली देख लक्ष्यवेध करना है। यह दो ही कर सके, अर्जुन और कर्ण।

मूल 'महाभारत' में कृष्ण का प्रवेश द्रुपद कन्या के स्वयंवर में है। उनका परिचय बंदीजनों ने दिया ये अनेक में एक है, ऐसे जनार्दन का प्रवेश हो रहा है। नक्षत्रों में, तारामंडल में ज्यों चंद्र सुशोभित है, न रूप का न अस्मिता का अहंकार न अपने व्यक्तित्व का अहंकार! कृष्ण के अर्थ सबने अपनी-अपनी तरह से किए हैं। फिर भी ये मौन रहे हैं। एक शे'र सुनिए -

अच्छे ने अच्छा बुरे ने बुरा जाना मुझे।
जिसको जितनी जरूरत थी उतना पहचाना मुझे।

भगवान योगेश्वर को ठीक लगे। कल मुझसे पूछा गया, कृष्ण को लेकर इतनी शिकायतें! प्रेम में शिकायत होती है। प्रेम के एक स्तर को भावदशा कहते हैं। भाव के ऐसे अनेक पड़ाव है। रूठना, मनाना, हंसना, रोना। मेरे देश का ऋषि बहुत कुछ कर गया है। अंत में है खो जाना फिर कुछ नहीं होता। परमप्रेम जब होता है, शिकायत नहीं रहती। शिकायत शून्य होती है। 'मानस' में कहूं तो भरत ने शिकायत नहीं की। परमप्रेम की अवस्था में तो भरतजी यूं बोले -

जेहि बिधि प्रभु प्रसन्न मन होई।
करुना सागर कीजिअ सोई।।

मेरा हरि जिसमें जितना रहे, मन प्रसन्न रहे। इससे ज्यादा महानता नहीं होती। पुष्टि मारग में, अष्ट सखाओं में, वल्लभ परंपरा में गोपी को प्रेम की ध्वजा मानी है। कवि काग ने कहा है -

धजाने धीरज ना होय, ए तो कायम फफडे कागडा.

गोपीओं में एक प्रेम की ऊंचाई है। इसलिए उसे सभी भावों को प्रस्तुत करने का अधिकार है। आप किसी को ताना कब दे सके? आपके पास वाणी और मन हो जाय। बिना मन के ताने कैसे मारे? वाणी भी होनी चाहिए प्रस्तुति के लिए। जब हमारे पास बुद्धि हो तभी निर्णय ले सकते हैं। अथवा तो आक्षेप या गुणानुवाद यह हमारे चित्त के संग्रहित संस्कार प्रकट हो तब दिया जाय। चित्त जरूरी है। कुछ न हो तो अपना अहंकार बोलता है। परमप्रेम की दशा में समग्र अंत:करण की शून्यता बताता है। मेरी दृष्टि से 'रामचरित मानस' प्रेमशास्त्र है, प्रेमसूत्र का संग्रह है।

परम प्रेम पुरन दोउ भाई।

एक ऐसी अवस्था का नाम प्रेम है। जहां सब भूला दिया जाता है। कृष्ण का वह त्रिभुवन विमोहित शाश्वत स्मित; जिसे वह मिले उसे मुक्ति मुठ्ठी में आ जाती थी। यह स्मित मुक्ति प्रदान करता था। अत: शुकदेवजी महाराज ने उसकी कथा, गुणगान को अमृत कहा और 'मंगल' शब्द से नवाजेश की।

तव कथामृतं तप्तजीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंङ्गलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्ति ते भूरिदा जना:।।

श्रवण मंगलम् है। एक अद्‌भुत अवतार जिसे हम पूर्णावतार कहते हैं, वह है और रहेगा। उन्होंने अपना आसन ग्रहण किया। कृष्ण चारो ओर देखते हैं। राजाओं को ऐसा लगा इसकी इतनी प्रशंसा की अत: यह हमारे सामने देखता है। पर कोई इसे पकड़ न सका क्योंकि ये इन सबको देखते नहीं थे। वे यह देख रहे थे कि अर्जुन आया कि नहीं? क्योंकि उस समय पांडवों का अज्ञातवास चल रहा था। अर्जुन दिख पड़ा तब पलके झुकाकर योगेश्वर को प्रणाम किया। कृष्ण ने मुस्कुराहट दी। 'महाभारत' में लिखा है कि इन्द्र वरदान देने आया है और कहा, मागो। तब अर्जुन में शाश्वत प्रेम हो ऐसा वरदान मागते हैं। कब कहा होगा यह? यह प्रेम तो अर्जुन ही पचा सके। 'गीता' में जब ऐसा कहा होगा कि 'पांडवानां धनंजय:।' तू मैं हूं। अवतार को अवतार ही पचा सके। भले शब्द न लगे। यह राम है उसे रावण ही पचा सके। अत: कागभुशुंडिजी चौक में घोषणा करते हैं, रावण भी अवतार है। तो अर्जुन लक्ष्यवेध कर सकता है, दूसरा कर्ण कर सकता है।

अथ श्री महाभारत कथा, कथा है पुरुषार्थ की...

साहब, कृष्ण तराजू लेकर बैठे हैं। पक्षपाती नहीं है। कृष्ण को पक्षपाती कहे तो इस जगत में कोई

निष्पक्ष जन्म ही नहीं ले सकता। कृष्ण निष्पक्ष तत्त्व है। आकाश जितना विशाल विचार जो हमें लक्ष्य तक पहुंचाये ऐसा कोई भी सूत्र, वाक्य, गीत, दोहा, श्लोक, नज़र, कथन, श्रवण, ऐसा कोई भी जप मंगल है। यह तलगाजरडी प्रसाद है। यह ब्रह्मांड ब्रह्ममय है, मंगलमय है। मात्राभेद हो सकती है। 'बिधि प्रपंच गुन अवगुन साना।' भूतकाल भूल जाय। सब सुंदर है। ओशो कहते थे, किसी एक संत के पास एक आदमी चीन से आता है; कहता है, मुझे सत्य की खोज है। मूल सार जानना है। बुद्धपुरुष के पास जाकर वह साधक यों कहता है कि मुझे सत्य खोजना है। आप मुझे देंगे? बुद्धपुरुष ने ऐसा कहा कि 'पेकिंग में चावल का भाव क्या है?' उसने कहा, हद करते हैं! मैं सत्य की खोज में निकला हूं और आप चावल का भाव पूछ रहे हैं? फिर से पूछा, तुम पेकिंग से आ रहे हो तो बताओ न चावल का क्या भाव है? उसने कहा, आप पागल है! क्या आप मुझे भी पागल कर देना चाहते हैं? मैं कितनी बड़ी यात्रा पर निकला हूं; आपका नाम सुनकर आया हूं और आप मुझे उस चावल का भाव पूछ रहे हैं! मैं जहां से गुजर जाता हूं उस रास्ते को मिटा देता हूं, मैं जिस सेतु पर से निकल जाता हूं उस सेतु को तोड़ डालता हूं। फिर सिर पर हाथ रखकर बुद्धपुरुष ने कहा, अब सत्य बताऊं। जिसने भूतकाल को छोड़ा हो उसे सत्य का पता लगता है। उपनिषदकार कहते हैं, जिसका अतीत का अनुसंधान खत्म हो गया हो तो सब मंगल ही मंगल है। बीत गई सो बात गई।

'रामचरित मानस' में राम को मंगलमूर्ति कहा है। यह जगत यदि राममय है तो जगत मंगलमय है। सीधी बात है। विचार विशाल होना चाहिए। सब मंगलायतन है। अपने यहां दूध मंगल है, घी मंगल है। घी नारायण स्वरूप है। शहद मंगल है। शक्कर और दही मंगल है। अत: पंचामृत मंगल कहा जाता है। जो साहित्य और संगीत क्षेत्र के हैं और उसी मार्ग से हरि को प्राप्त करना चाहते हैं, वे सभी जानते हैं, साहित्य में नौ रस मंगल है। हास्यरस भी मंगल है। वीररस भी मंगल है। बीभत्स भी शुभसंकेत करता है। भयानक रस भी हमारे कंपन को बंद करने का प्रयत्न है। अद्‌भुत रस भी हमें परम आश्चर्य देकर जैन जैसी शांति देने का प्रयत्न है। करुणरस पाप धोने का प्रयत्न है। यह देश ही कर सके; ऐसा रौद्ररस है। शृंगार रस भी मंगल है। जैसे राम और कृष्ण के शृंगार। शास्त्रों में कहा है, ध्यान मंगलतत्त्व है। ध्यान करते हो तो करते रहना। मेरे तो ध्यान पल्ले ही न पड़ा! ध्यान पर अपने यहां बहुत काम हुआ है। ध्यान अद्‌भुत वस्तु है। पतंजलि की आठ पायदानों में से एक अद्‌भुत पायदान है। साहब, हम जप करे तो वह भी मंगल है। जप मंगल है। यज्ञ भी मंगल है। भारतीयों ने यह प्रदान किया है। जप-तप मंगल है। मानवी तप करे तो आलोचना मत कीजिए। तप का अतिरेक भी नहीं करना है। सबसे बड़ा तप शीत, उष्ण, मान-अपमान, निंदा-स्तुति ये सब सह ले, हंसता रहे यही सबसे बड़ा तप है। तप मंगल है।

तो, साहित्य के सभी रस मंगल है। सातों सूर मंगल है। सूर्य, चंद्र, नक्षत्र, नदी, पृथ्वी मंगल है। गुरु का अनुग्रह हो तो नौ ग्रह मंगल है। तुलसी कहते हैं, तू राम भज; दिशाएं भी मंगल है।

भाय कुभाय अनख आलसहु।
नाम जपत मंगल दिसि दस हुं।।

सरस्वती मंगल है। गणपति मंगल है।

प्रेमनगर की गलियां गहरी लाखो लोग,
हे मुसाफिर, तू प्रेमनगर मत जाना...

तो बाप, यह सातवीं कक्षा का स्कूल है। इसमें 'उत्तरकांड' मिल जाय! अपनी तो यही नींव है। तो बाप, सब मंगल है। आनंद ही आनंद है। बिल्ली की सातवें घर आंख खुलती है, साहब! 'उत्तरकांड' तक कुछ खुलापन आ जाय तो फिर आनंद ही आनंद! सब मंगल। सातों दिन मंगल। नौ ग्रह मंगल। दसों दिशाएं मंगल। चारों युग मंगल। तुलसीदास ने छोटा-सा पार्वती ग्रन्थ लिखा है। छोटा-सा पर विचारणीय ग्रन्थ है। दूसरा ग्रन्थ जानकी मंगल है। ये सभी अद्‌भुत ग्रन्थ है। जिसके तात्त्विक अर्थ है। तुलसीदास के बारह ग्रन्थ बारह मुख्य उपनिषद जैसे हैं। लगता है, तुलसी के नए उपनिषद है।

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।

राम का पतंग उड़ाना आप देखिए! राम ने पतंग उड़ाई है। राम की पतंग ठेठ स्वर्ग तक गई। वह पतंग इन्द्र की पुत्रवधू ने पकड़ ली है, जयन्त की पत्नी ने। राम की पतंग अच्छी है। हमारी उन्नति की पतंग हमारे निकट के ही काटते हैं, दूर के नहीं काटते। वे तो खुश होते हैं! यह जिन्दगी कटी पतंग है, साहब! उड़े तब तक अच्छी लगे। कट जाय तब झाड-झंखाड में फंस जाय। जयंत की पत्नी ने पतंग पकड़ ली, लौटाई नहीं। बाल सहज लीला में भगवान की आंख में आंसू आ गए, 'मेरी पतंग ला दीजिए, मेरी पतंग ला दीजिए।' माँ कौशल्याजी समझाती है, 'दूसरी पतंग ला दूं।' तो कहे, 'ना, वही चाहिए।' फिर वशिष्ठजी बुलाए गए। फिर हनुमानजी स्वर्ग में भेजे गए। कहा, पतंग दे दे। जयंत की पत्नी ने कहा, पतंग नहीं दूंगी। फिर हनुमानजी ने समय दिया लौटाने का और कहा, नहीं देगी तो फिर दण्ड मिलेगा। राम की अवतारलीला में जयंत चित्रकूट आया तो रामजी ने उसकी एक आंख फोड़ डाली। जयंत ने कहा, 'तूने पतंग नहीं दी, मेरी एक आंख गई!' ऐसा विनोद है। इसके पीछे तत्त्वज्ञान भी है। ऐसा करते-करते अपनी आंख खुल जाय। इसलिए-

मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी।।

कल रात यज्ञ के पास बैठा था। तब एक स्मृति ताजी हुई। मेरे सद्‌गुरु भगवान त्रिभुवनदास दादा ने 'मंगल' शब्द के एक-एक अक्षर का अर्थ किया था। 'म' के ऊपर जो अनुस्वार 'मं' है उसका अर्थ दादा ने किया था 'मंत्र।' मंत्र माने विचार। पर विचार तो संकीर्ण भी हो और उदार भी हो। जो एकदम संकीर्णता लेकर समाज को बांधे उसे क्या मंत्र का दर्जा देना चाहिए? मंगल का दूसरा अक्षर 'ग' माने गगन। विचार संकीर्ण नहीं होना चाहिए पर गगन जैसा विशाल होना चाहिए। आकाश जितना विस्तृत विचार होना चाहिए। परंतु केवल विचार ही आकाश जितना विशाल हो इससे क्या? तब दादा ने मुझसे कहा था, बेटा, 'ल' का अर्थ लक्ष्य है। जो विशाल विचार तुम्हें लक्ष्य तक पहुंचाये वह घटना मंगल है।

साधु सुमंगल है, बुद्धपुरुष के वचन सुमंगल है

'मानस-मंगलभवन'; इस एक विचार की हम परिक्रमा कर रहे थे। हमारा विनम्र प्रयत्न सभी दिशाओं से देखने का रहा। भगवान राम-लक्ष्मण जनकपुर में विश्वामित्र के साथ है। शाम को जनकपुरदर्शन करने गए। जनक समाज नाम-रूप को मिथ्या मानते हैं, उन्हें नाम और परम के रूप की ओर आकर्षित करने गए हैं। समस्त जनकपुरी, आबाल-वृद्ध इन दो राजकुमारों के दर्शन में डूबी है। जनकपुर के निवासियों को जिज्ञासा हुई है कि ये कौन है? नाम क्या है? किसके साथ आए है?

तुलसीदास के प्रत्येक प्रसंग में घटित घटना तो है ही, परंतु उसके साथ सतत आध्यात्मिक रहस्य रखते हैं। जिससे यह कथा केवल एक कालविशेष की ना रहे, युगविशेष की ना रहे पर हम सबके जीवन का एक सत्य बनी रहे। दूसरे दिन राम-लक्ष्मण गुरु की पूजा के लिए पुष्प लेने जनक की वाटिका में जाते हैं। उसी समय तुलसी ने जानकीजी का प्रवेश कराया है। अपनी आठ सखियों के साथ जानकी गौरीपूजा हेतु आती है। राम का हेतु भी गुरुपूजन है। एक सखी उद्यान देखने के लिए रुक गई है। राम दिख पड़े। अलौकिक राम-दर्शन करके सखी दौड़ती हुई मंदिर में आई। भवानी की स्तुति करते सीता को रोककर कहती है, जानकी, गत संध्या को जिन राजकुमारों ने जनकपुर को रूप से भर दिया था और तू मुझसे पूछ रही थी कि कौन राजकुमार है, वही आज उद्यान में है। अभी एकांत है; गौरीपूजा बाद में करना, पहले रामदर्शन कर ले। सीता रामदर्शन हेतु उत्सुक है। जानकी सखी को आगे कर रामदर्शन हेतु जाती है। जिसने राम को देखा हो ऐसे आदमी के मार्गदर्शन में हम चलें तो राम से रूबरू हो सके। जिसने देखा हो वही हमें दिखा सके। केवल विवरण से दर्शन नहीं हो सकते। जो दर्शन करके आया हो उसके द्वारा ही हो सकता है, फिर चाहे हम

कितने ही बड़े हो! उसे आगे रखना है, उसे श्रेष्ठता देनी है। यह अपने धर्म का नियम है। जिसे हम गुरु कहते हैं, बुद्धपुरुष कहते हैं।

जानकी चलती है तब उसके पैर के नूपुर, हाथ के कंगन, कटिभाग की करधनी इन सबकी आवाज़ हो रही है। दूर से जानकीजी को देखकर राम लक्ष्मण से कहते हैं, यह जनककन्या है जिसके लिए इतना बड़ा धनुषयज्ञ हो रहा है। जिसका अलौकिक रूप देखकर मेरा पवित्र मन सहज में ही उनकी ओर आकर्षित हो रहा है। रामजी का रूप भी परम मंगल है। अलौकिक रूप की ओर पवित्र मन का आकर्षित होना स्वाभाविक है। रूप आलौकिक, मन पवित्र तो वह आकर्षण पाप नहीं, प्रेम है। राम ब्रह्म है। जानकी पराम्बा है। इस दृष्टि से तो दूसरा कुछ विचारने का सवाल ही नहीं उठता।

आंख के दरवाजे से हृदय के भीतरी कमरे में सीताजी ने राम को बिराजमान किया ताकि राम चले न जाए। सयानी जानकी ने राम के रूप को हृदय में जगह दी। यहां भगवान राम भी प्रेम की अति कोमल स्याही लेकर चित्त के कागज पर जानकी का चित्र अंकित करते हैं। परस्पर आकर्षित है। कहीं भी मर्यादा भंग नहीं हुआ है। राम से मन हटता नहीं। मर्यादा है, अत: जानकी पीछे मुड़कर राम के दर्शन करती है। राम के दर्शन का बहाना केवल मंदिर ही नहीं होता। वृक्षों के बहाने भी राम दिखने चाहिए। प्रकृति के सभी तत्त्व द्वारा हम राम के दर्शन कर सकते हैं। सीताजी फिर से भवानी मंदिर गई। माँ पार्वती की स्तुति की। यह बहुत सिद्ध स्तुति है। इस स्तुति का जो पाठ करे, कुंआरी कन्या इस स्तुति का पाठ करे तो उसे अच्छा लड़का मिले।

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी।।
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता।।

जानकी ने सुंदर स्तुति की। पार्वती विनय और प्रेम के वश हुई। पार्वती की मूर्ति डुली, हंसी और प्रसादी की माला मूर्ति के कंठ में से जानकीजी के हाथ में आई। मूर्ति बोली। यहां चार घटना घटित हुई है। मूर्ति का हिलना, मूर्ति का बोलना, मूर्ति का हंसना और मूर्ति द्वारा माला की प्रसादी जानकी के हाथ में आना। बुद्धि ये सब कबूल नहीं कर सकती। मुझे तो यही कहना है कि हमारे लिए अमुक वस्तु असंभव है इसका अर्थ यह कभी नहीं हो सकता कि ऐसा नहीं होता। हमारे लिए संभव नहीं। जानकी स्तुति करे और पार्वती की मूर्ति बोले, हंसे; आध्यात्मिक जगत में यह सब संभव है। ऐसा होता है। ये सभी भावजगत के सत्य है। हम मूर्ति में हरि के दर्शन करते हैं। अब जो मूर्ति में नहीं मानते हैं उन्हें हमारा भाव समझ में नहीं आता कि यह मूर्ति, पत्थर की पूजा! कृष्ण ने ऊंगली से पर्वत उठाया। समस्त ब्रज को बचाया। एक हनुमानजी ने पत्थर उठाया। लक्ष्मणजी को जीवतदान दिया। नल-नील के कहने से सभी बंदरों ने पत्थर उठाकर पानी में डाले तो सेतुनिर्माण हुआ। इतना सारा काम पत्थरों ने किया उस पत्थर की मूर्ति को शायद सनातनधर्मी ईश्वर माने, गिरिराज परमात्मा मानकर भक्ति करे, तो उसके पास कई कारण है। उसकी आलोचना नहीं करनी चाहिए।

यहां तो जानकी जगदंबा है; पार्वती पराशक्ति है। सीताजी स्तुति करे और मूर्ति डोले, बोले और हंसे। सब संभव है। कोई श्रेष्ठता से गाए तो हम मूर्ति जैसे हो जाते हैं। कैसे दाद दे? फिर कुछ मनपसंद आ जाय तो हम ऐसे डोले वह मूर्ति का हिलना कहलाए। उसी स्तर से अद्‌भुत गायकी शुरू हो, सूर-ताल एक समान हो तो मूर्ति हिलती तो है। हमारे चेहरे पर भी मुस्कुराहट आती है। इतना ही नहीं साहब, उस समय हमारे पास रही शाल फेंकने की इच्छा

हो या रूपये फेंकने की इच्छा हो आती है। यह फूल माला देने की बात है। इतना ही नहीं, ज्यादा आनंद आए तो मूर्ति बोले कि वाह, वाह, जय हो, जय हो!

तो बाप, मूर्ति बोले इसमें आश्चर्य नहीं है। 'जानकी, तेरे मन में जो सांवरा राजकुमार बस गया है वही तुम्हें मिलेगा।' आशीर्वाद दिए हैं। जो सहज सुंदर है ऐसे राम तुम्हें मिलेंगे। जो शील को जानते हैं ऐसे राम मिलेंगे। गौरी के आशीर्वाद से शुभ शगुन हुआ है। इस ओर सीता के सौन्दर्य की सात्त्विक सराहना करते-करते राम और लक्ष्मण पुष्प लेकर गुरु के पास आए। विश्वामित्र की फूल से पूजा की। गुरु ने आशीर्वचन दिये।

अब धनुषयज्ञ का दिन है। विश्वामित्रजी राम-लक्ष्मण को लेकर जाता है। हजारों नेत्र राम की ओर लगे हैं। अटारी में जानकीजी सखियों के संग बैठी है। बीच में महादेव का धनुष पड़ा है। घोषणा हुई, 'हे राजाओं, आप अपने पौरुष का दर्शन कराइए।' एक के बाद एक राजा निष्फल प्रयास करते हैं। कोई भी धनुष तोड़ नहीं पाए। राम ही तोड़ सके हैं। इसका आध्यात्मिक कारण यह है कि जो राजा आए थे वे अपने गुरु के साथ नहीं आए थे। राम अपने गुरु के साथ आए थे। अहंकार का धनुष उन से ही टूटेगा, जिसके सिर पर गुरु का हाथ है। सन्नाटा छा गया! जनक को लगा, धरती पर कोई वीरपुरुष है ही नहीं! रामजी धनुष के पास पहुंचकर परिक्रमा करते हैं। गुरु को दूर से प्रणाम करते हैं। हमारी समस्या हमारा गुरु ही उठा लेता है। दो क्षण के मध्यभाग में धनुषभंग की घटना घटी। सब स्तब्ध रह गए। जानकीजी ने जयमाला पहनाई। जयजयकार हुआ। परशुराम आए। लक्ष्मण-परशुराम संवाद होता है। अंत में प्रभु के गर्भित वाक्य सुनकर परशुरामजी रामजी की स्तुति करने लगे। दूतों को अयोध्या भेजे। दशरथजी बारात लेकर आए। और माघ शुक्लपक्ष में पंचमी को गोधूलि बेला में राम के ब्याह का समय निश्चित हुआ। ठाकोरजी बिराजमान है। जानकीजी आती है। मंगल विधि शुरू होता है। वशिष्ठजी ने जनकजी से पूछा, आपके छोटे भाई की पुत्री श्रुतकीर्ति और मांडवी अनब्याही है। हमारे तीनों राजकुमारों के साथ ब्याह करें। निर्णय लिया गया। भरतजी के साथ मांडवी, शत्रुघ्न के साथ श्रुतकीर्ति और लक्ष्मण के साथ ऊर्मिलाजी का ब्याह हुआ। विधिवत् ब्याह संपन्न हुआ। काफी दिनों तक बारात रुकी। फिर बिदा हुई। सीता के अयोध्या में आने के बाद समृद्धि में वृद्धि हुई है। महेमान बिदा हुए। विश्वामित्र को पूरा अयोध्या समाज सजल नयनों से विदा देता है। सम्राट स्वयं संत से कहते हैं कि हे विश्वामित्रजी, हम आपको कुछ नहीं दे सके हैं पर -

नाथ सकल संपदा तुम्हारी।
मैं सेवकु समेत सुत नारी।।

'हमारे बालकों पर अनुग्रह करते रहियेगा।' विश्वामित्र बिदा लेते हैं। पैदल यात्रा है। दशरथ के बड़े काम कर दिए। इन्होंने चार की संख्या आठ कर दी। यह है साधु और महापुरुषों की महिमा! यहां 'बालकांड' पूरा होता है।

'अयोध्याकांड' के आरंभ में समृद्धि का वर्णन है। अतिशय समृद्धि के बाद विपत्ति का प्रवेश होता है। राम बनवास हुआ। कैकेयी ने दो वचन मांगे। भरत को राज, राम को बनवास। राम को चौदह वर्ष का बनवास मिला। महाराज मूर्छित हुए। राम-लक्ष्मण-जानकी बन में गए हैं। चित्रकूट की ओर यात्रा शुरू होती है। शृंगबेर छोड़कर सुमंत लौटे। राम नौका से पार लगकर भरद्वाज के पास पहुंचे। फिर वाल्मीकि के आश्रम में से चित्रकूट आकर निवास करते हैं।

सुमंत लौट आए। समाचार दिए। तीन में से कोई लौटकर नहीं आये तो जीने की आशा छोड़ दी। दशरथजी ने छः बार 'राम' शब्द का उच्चारण कर प्राण त्याग दिए।

भरतजी बुलाए गए। राज्य शासन का क्या करे? सर्वानुमत से निर्णय लिया, हम चित्रकूट जाय और प्रभु का निर्णय शिरोधार्य करे। पूरी अयोध्या चित्रकूट जाती है। सभाएं होती है। आखिर में परमप्रेम में परमशरणागति होती है। भरतजी ने कहा, 'प्रभु, जैसी आपकी प्रसन्नता।' राम ने कहा, चौदह बरस के बाद लौटकर आऊंगा। भरत के मनोभाव को समझते राम ने भरत से पूछा, 'कुछ कमी अनुभव कर रहे हो?' 'मुझे आप आधार दीझिए।' कृपावान स्वभाव से प्रभु ने निर्णय लिया -

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।

कृपा हो तो ही पादुका मिलती है। भरतजी लौट गए। अच्छा दिन देखकर पादुका को सिंहासन पर बिराजमान करते हैं। भरतजी पादुका से पूछपूछकर राज्यसंचालन करते हैं। पर वे नंदिग्राम में तपस्वी बनकर रहते हैं।

'अरण्यकांड' में भगवान चित्रकूट से निकलकर पंचवटी में निवास करते हैं। पंचवटी में शूर्पणखा दंड़ित हुई। फिर खर-दूषण त्रिशरा को निर्वाणपद दिया। रावण मारीच द्वारा सीता का अपहरण कर गया। राम-लक्ष्मण जानकी के वियोग में मानवलीला करते हुए घूम रहे हैं। जटायु दिख पड़े तब उन्होंने सारी बातें बताई। राम ने जटायु को पितातुल्य आदर देकर अग्निसंस्कार किया। शबरी के आश्रम में प्रभु आए हैं। परमात्मा ने शबरी के नवधा भक्ति की बातें बताई। शबरी, 'प्रथम भगति संतन्ह कर संगा।' दूसरी भक्ति जहां कथा हो, 'दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।' उसमें जितना समय मिले, कथा में बैठकर प्रभु के गुणगान श्रवण करने हैं। तीसरी भक्ति, आप किसी को गुरु मानते हो तो अभिमान छोड़कर सेवा करनी है। उनकी इच्छानुसार सेवा करनी है। चौथी भक्ति 'मम गुन गन करइ कपट तजि गान।' सत्य, प्रेम, करुणा का गान कीजिए। कपट मत रखिए।

पांचवी भक्ति, मेरे किसी भी मंत्र में विश्वास रखकर जप करना। छठ्ठी भक्ति संयम में रहना, मर्यादा में रहना। संस्कार न भूलना। सभ्यजीवन जीना। विरति माने हमें प्रभु ने जो दिया हो और सामनेवाले को जरूरत हो, प्रसन्नता चाहता हो तो उन्हें देना। ढेर सारे कर्मों से युक्त नहीं हाना है, निवृत्त होना है। सातवीं भक्ति पूरे जगत में बस, मेरा हरि है। मैं किसी की निंदा न करूं। किसी को ठगूंगा नहीं। दूसरों के दोष नहीं देखने हैं। आठवीं भक्ति हमें प्रामाणिकता से जो मिले उसमें संतोष रखना। सपने में भी किसीके दोष देखने नहीं है। इसमें कोई विधि, दीक्षा, प्राणायाम, आसन कुछ भी नहीं है। नौवीं भक्ति सरल जीवन जीना। हरि के भरोसे जीना। सुख-दु:ख को प्रसाद मानना। भक्ति-श्रवण करने के बाद शबरी ने योगाग्नि में देह विलीन किया। निर्वाण हुआ। भगवान पंपा सरोवर आए। नारदजी आए। सारी बातें हुई।

'अरण्यकांड' के बाद प्रभु 'किष्किन्धाकांड' जाते हैं। हनुमानजी मिलते हैं। सुग्रीव और राम की मैत्री हुई। बालि का वध हुआ। सुग्रीव राजा हुआ। अंगद युवराज बना। चातुर्मास पूरे हुए। जानकी खोज का अभियान शुरू हुआ। दक्षिण दिशा में हनुमानजी साथी समेत गए। प्रभु ने मुद्रिका दी। सीता की खोज दसों दिशाओं में शुरू हुई। स्वयंप्रभा की गुहा में जलपान किया। कहा, 'आप संपाति से मिलिए।' संपाति ने कहा, सीताजी लंका में है। सब ने अपने को कसा। हनुमानजी चुप थे। जामवंतजी ने आह्वान किया कि राम के काम के लिए तुम्हारा अवतार है। और तुम चुप हो? तो, हनुमान ने पर्वताकार रूप धारण किया! 'किष्किन्धाकांड' पूरा हुआ। लंका जाने की तैयारी। 'सुन्दरकांड' का आरंभ होता है।

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई।।

हनुमानजी लंका में गए हैं। हर जगह जानकी को खोजते हैं। विभीषण से मिले। सीताजी का ठिकाना बताया। सीताजी के पास आए। माँ को मुद्रिका दी है। माता ने पुत्र समझ आशीर्वाद दिए। फलफूल खाए। असुर मारे। इन्द्रजित हनुमान को बांधकर रावण की सभा में लाता है। संवाद-विवाद हुआ। हनुमानजी को मृत्युदंड का निर्णय हुआ। उस समय विभीषण आकर कहते हैं कि नीति ना कहती है, दूत अवध्य है। पूंछ जला दे; जला दी गई। हनुमानजी को पूरे नगर में घूमाया गया। हनुमानजी माँ के पास गए। चूडामणि लिया। हनुमानजी आए। जामवंत ने रामजी को हनुमान की कथा सुनाई। सब तय हो गया। अभियान शुरू हुआ।

सभी समुद्रतट पर आए। रावण ने विभीषण का देशनिकाल किया। अपने सचिवों के साथ विभीषण राम की शरण में आया। भगवान तीन दिन व्रत में बैठे। समुद्र के जवाब न देने से धनुषबाण उठाए। समुद्र शरण में आया, 'प्रभु, सेतु बनाइए।' प्रभु को यह बात संगत लगी। 'लंकाकांड' की शुरूआत में सेतुनिर्माण हुआ। भगवान की इच्छा से भगवान राम के हाथों रामेश्वर महादेव की स्थापना हुई। लंका में प्रवेशकर सुबेर पर पड़ाव डाला। अंगद राजदूत के रूप में संधि हेतु जाता है। रावण असहमत हुआ तो युद्ध अनिवार्य बना। भयानक युद्ध होता है। अंत में प्रभु ने इकत्तीस बाण चढ़ाकर रावण को निर्वाण दिया। रावण का तेज राम में समा गया। मंदोदरी आई। रावण की अंतिम क्रिया हुई। विभीषण का राजतिलक हुआ।

जानकीजी को समाचार दिए। वे अग्नि में समाई हुई थी। प्रतिबिंब था वह अग्नि में पुन: जला और माताजी मूल स्वरूप में प्रकट हुई। राम और जानकी का मिलन हुआ। पुष्पक वायुयान तैयार हुआ है। आकाशमार्ग से रामेश्वर के दर्शन किए। मुनियों से मिले। प्रभु केवट के पास आए। हनुमानजी को अयोध्या भेजा। हनुमानजी ने खबर पहुंचाई। प्रभु पधारे हैं। प्रभु वायुयान से अयोध्या उतरे हैं। प्रभु ने ऐश्वर्यलीला की। अनेक रूप धारण किए। सर्वप्रथम प्रभु कैकेयी माँ के भवन गए हैं। संकोच दूर किया। सुमित्रा के यहां गए। कौशल्या माँ के पास गए। वशिष्ठजी ने दिव्य सिंहासन मंगवाया। सीता-रामजी को बिराजमान होने का आदेश दिया। प्रभु धरती, सूर्य, दिशाएं, प्रजाजन, माताएं, ब्राह्मण और देवताओं को प्रणाम कर सिंहासन पर बिराजमान हुए। विश्व को रामराज्य देते हुए वशिष्ठजी ने राम के भाल पर तिलक किया।

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

राजतिलक हुआ है। जयजयकार हो गया, राम के साथ आए हुए मित्र छ: माह तक रुके। प्रभु ने सबका योग्य सन्मान कर बिदा दी। हनुमानजी रुक गए। उन्होंने वहां निरंतर वास किया है। राम की नरलीला है। समय मर्यादा हुई जानकीजी ने दो पुत्रों को जन्म दिया। उसी तरह तीनों भाईयों के यहां दो-दो पुत्रों का जन्म हुआ है।

'रामचरित मानस' संवादी शास्त्र है। तुलसी दुर्वाद नहीं लिखते। रघुवंश के वारिस का नाम स्मरण कर तुलसीदास कथा पूरी करते हैं। फिर कागभुशुंडि और गरुड का संवाद है। गरुड ने सात प्रश्न पूछे हैं, उसके जवाब दिये हैं। कथा सुनकर गरुडजी सद्गुरु को प्रणाम कर बैकुंठ जाते हैं। याज्ञवल्क्य कथा पूरी करते हैं कि नहीं, यह बताया नहीं है। फिर शंकर भगवान पार्वती के सामने कथा पूरी करते हैं।

इस कथा का केन्द्रीय विचार 'मानस-मंगलभवन' रहा। समस्त जगत ब्रह्ममय है। यह सब मंगलमय है। मात्राभेद का सवाल है। हमारी आंख ऐसी है कि हमें सबकुछ मंगल नहीं दिखता। तुलसीदास ने कहा है, सात वस्तु में तो मंगल के दर्शन अवश्य कीजिए। सात वस्तु परममंगल है।

सुधा साधु सुरतरु सुमन सुफल सुहाविनी बात।
तुलसी सीतापति भगति सगुन सुमंगल सात।।

तुलसीदास ने कहा कि सात वस्तु परम मंगल है। सुधा माने अमृत; अमृत मंगलमय है। कौन-सा अमृत मंगलमय? परमहंस शुकदेव ने ऐसा गाया कि कृष्ण की कथा अमृत है। इसलिए कथा मंगलमय है। दूसरा अमृत; तुलसी कहते हैं राम का नाम अमृत है। राम की कथा अमृत है। जो वचन हमारे मोहरूपी अंधकार का नाश करे ऐसे किसी बुद्धपुरुष के वचन मंगल है। साधु सुमंगल है। तीसरा सुरतरु माने कल्पवृक्ष। 'रामायण' स्वयं कल्पवृक्ष है। सुमन; फूल को मंगल कहा है। सुफल; अच्छा फल। एक ऐसा फल जो अकेले नहीं, बांटकर खाये वह मंगल है। हमें कहनी अच्छी लगे, दूसरों को भी अच्छी लगे ऐसी किसी अच्छी बात को परममंगल की पदवी तुलसी ने दी है। सीतापति की भक्ति, कोई भी भक्ति, उसकी ओर प्रेम परम मंगल है।

सुधा माने अमृत; अमृत मंगलमय है। अमृत है कि नहीं यह प्रश्न है। अमृत देखा कहां है? सिर्फ सुना है। ज़हर तो देखा है, पिलाया गया है! कौन-सा अमृत मंगलमय? दो अमृत, एक 'भागवत' में, एक 'रामायण' में।

तव कथामृतं तप्तजीवनं कविभिरीडितं कल्मषापहम्।
श्रवणमंगलं श्रीमदाततं भुवि गृणन्तिते भूरिदा जनाः।।

परमहंस शुकदेव ने ऐसा गाया कि कृष्ण की कथा अमृत है। यह हम सुनते भी है, पीते भी है। अतः कथा सुधामयी और मंगलमयी है।

तुलसी दूसरा अमृत बताते हैं, 'उमा सहित जेहि जपत पुरारी।' राम का नाम अमृत है। राम की कथा अमृत है। जिसकी आंख में विकार न हो उसकी आंख में अमृत है, अतः मंगल है। जो वचन हमारे मोहरूपी अंधकार को दूर करे, नष्ट करे ऐसे बुद्धपुरुष के वचन भी मंगल है। साधु सुमंगल है। सुबह में साधु मिले तो समझना मंगल होगा। साधु की कोई जात नहीं, वर्ण नहीं। 'रामचरित मानस' में राम को साधु कहा है; शंकर को भी साधु कहा है। 'साधु' बहुत पवित्र शब्द है। तीसरा सुरतरु माने कल्पवृक्ष। 'रामचरित मानस' में कल्पवृक्ष मंगल की बात आती है। कल्पतरु का अर्थ यह है कि आदमी ऐसी भूमिका पर पहुंचे कि उसने जो कल्पना की हो, ऐसा होता है। यह मनपसंद बात है। 'रामायण' स्वयं कल्पतरु है।

सुमन; पुष्प को मंगल कहा है। स्वामी रामतीर्थ यों कहते कि भगवान को चढ़ाने ज्यादा फूल मत तोडिए। डाली पर खिला वह भगवान पर चढ़ ही गया है। उसे मत तोडिए। डाली पर खिला फूल भगवान पर चढ़ ही गया है। उसे मत तोडिए। सुमन माने फूल। दूसरा अर्थ अच्छा मन। सद्भाव से भरा मन। यही अपना कल्पतरु है। अपने मन में सद्भाव हो, द्वेष न हो, तो यह मंगल है। सुफल माने अच्छा फल। ऐसा फल जो अकेला नहीं पर बांट के खाय यह मंगल है। फल माने पुरुषार्थ के बाद प्राप्त हुई कामयाबी। हम अकेले कामयाबी भुगत न सके। उसमें सबको हिस्सेदार बनाए। यह भाव मंगल है। 'रामायण' के चार सुफल धर्मफल, अर्थफल। अर्थ माने पैसा। अर्थ का फल मिले तो सार्थक करना। दसवां हिस्सा निकालना। पूरी अर्थव्यवस्था सुंदर हो जाय। हमारा काम जिस अर्थ में ले, पुरुषार्थ-फल माना है। यह भारत के ऋषियों की विशालता है। वे सर्जनात्मक देव है। मोक्षफल; किसी के प्रति राग नहीं, द्वेष नहीं यही अपना मोक्ष है। चित्त मुक्त बने वही मोक्ष है। हमें अच्छी लगे, औरों को भी अच्छी लगे ऐसी बात उसे तुलसी ने परम मंगल कहा है।

तुलसी मानते हैं, यह कलिकाल है। अन्य कोई साधना हमारे लिए सुलभ नहीं है। हमारे लिए तो तीन ही साधन है -

रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि।
संतत सुनिअ रामगुन ग्रामहि।।

राम का स्मरण करना। सत्य का स्मरण करना। प्रेम की स्मृति रखनी। करुणा नहीं भूलनी। राम को गाना। रामगीत गाना, सत्य गाना, प्रेम से गाना। करुणा से गाना। राम को सुनना।

नौ दिनों की रामकथा का सुफल हम सब मिलकर मन में तो रणेश्वर की स्थापना हो चुकी है ऐसे रणेश्वर, तुम्हारे आसपास मेरे देश के जवान बैठे हैं। अपना परिवार छोड़कर भूत की तरह भटकते हैं ठंडी और गर्मी में। रणेश्वर, यह कथा हम आपको अर्पण करते हैं, अतः तुम कथा का फल लेकर मैंने जवानों को ज्यादा बल देना। सभी जगह अच्छा रहे, सद्भाव रहे, ऐसा करते रहना। तो, इस कथा का फल रणेश्वर भगवान को समर्पित।

मानस-मुशायरा

तेरे ईश्क की इन्तिहा चाहता हूं।
मेरी सादगी देख क्या चाहता हूं।

– इकबाल

चरागों के बदले मकां जल रहे हैं।
नया है जमाना नई रोशनी है।
न हारे हैं इश्क न दुनिया थकी है,
दीया जल रहा है, हवा चल रही है।

– खुमार बाराबंकवी

तेरी खुश्बू का पता करती है,
मुझ पे एहसान हवा करती है।

●

मुझको इस राह पे चलना ही नहीं,
जो मुझे तुझसे जुदा करती है।

– परवीन शाकीर

इन बिगड़े दिमागों में भरे अमृत के लच्छे हैं।
हमें पागल ही रहने दो, हम पागल ही अच्छे हैं।

– स्वामी रामतीर्थ

हम कभी आयेंगे नहीं वाइज़ तेरे बुतखाने में,
क्योंकि इस मयखाने की मिट्टी इस मयखाने में।

– जिगर मुरादाबादी

इन रास्तों ने जिन पर कभी तुम साथ चलते थे,
मुझे रोककर पूछा कि तेरा हमसफर कहां हे?

– बशीर बद्र

कवचिदन्यतोऽपि

साधु का धैर्य भी पूजायोग्य है और बलिदानी शौर्य भी पूजायोग्य है

नानाभाई ह. जेबलिया मार्ग नामाभिधान अवसर पर मोरारिबापू का उद्‌बोधन

नानाभाई के पुण्यश्लोक नाम के साथ एक मार्ग तय होता है सावरकुंडला में। नगरपालिका कम समय में प्रस्ताव पारित करे और सब चरितार्थ हो जाय इस घटना को बोरीसागर साहब ऐतिहासिक घटना कहते हैं। जिसके गौरव को मैं भी स्वीकार करता हूं। यहां नानाभाई के साथ के तीन वरिष्ठ अधिकारीओं ने अपनी बातें कही। अनुभव पेश किए। मेरा भी नानाभाई के साथ थोड़ा संबंध रहा था। वे सावरकुंडला आये। स्वस्थ थे। कान के कच्चे नहीं थे, पर सच्चे थे। मैं तब मी मिला हूं। फिर श्रवण नहीं रहा तब भी मिला हूं। बार-बार मिलने का होता था। मेरा एक सरीखा अनुभव रहा है। इसका स्मरण मुझे हंमेशा रहेगा। मुझे यह बात कहनी है।

सावरकुंडला से १५ की.मी. दूर सेंजल है। काठीओं का,क्षत्रियों का गांव है। मैं जिस साधु परंपरा में हूं उसके मूल पुरुष ध्यानस्वामीबापा, सेंजल के टीले पर, बरसों पहले निम्बार्क परंपरा में संत, व्रज में से आए थे। वहां उनकी समाधि है। वह हमारी श्रद्धा का स्थान है। नानाभाई भी वहां आते रहते थे। काठीओं के गांव में नानाभाई काठी ज्ञाति में प्रगट हुए हमारे महंत वसंतदासबापू ने मुझ से कहा कि नानाभाई से कहा जाय कि ध्यानस्वामीबापा के बारे में कुछ लिखे। मैंने कहा, मैं नहीं कहूंगा। लिखवाकर क्या करना है? पर्चे छपवाने हैं? मैं इस मत का नहीं हूं। यह आदमी लिखेगा भी नहीं। हमारे हरियाणी समाज ने स्थान का नवनिर्माण किया। वहां काठी कौम के कुछेक स्मारक है। आप वहां जायेंगे तो खयाल आयेगा। एक बात ऐसी भी आई कि स्मारक के लिए अलग जगह तय करें। स्मारकों को व्यवस्थित करें। मैंने कहा, ऐसा नहीं कर सकते। स्मारक वहीं रहने चाहिए। जिन्होंने बलिदान दिए हैं उनके स्मारकों को हमने बहुत आदर के साथ रखे हैं। एक ओर साधु की समाधि, दूसरी ओर बलिदानी स्मारक। ऐसा संगम समाज में रहना चाहिए। साधु का धैर्य पूजायोग्य है और बलिदानी शौर्य भी पूजायोग्य है। साहब, जीवनरथ के ये दो चक्र है।

सौरज धीरज तेहि रथ चाका ।
सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका ।।

एक पहिया धर्मरथ का मानी सत्य का, प्रेम और करुणा का तथा एक पहिया शौर्य का। एक पहिया धैर्य का है। वहां काठी की एक समाधि है। उस पर लिखा है 'चेतन समाधि।' मुझे 'चेतन' शब्द प्रिय है। ऐसा कहा जाता है कि वहां ध्यान स्वामीबापा ने जीवित समाधि ली। ऐसा क्यों किया इससे मुझे सरोकार नहीं रखना है। पर वहां कोई जीवंत है, इतना मुझे पता है। जीवित ले इससे मृत्यु समाधि ले तो आप को क्या आपत्ति है? शायद कोई योगी पुरुष ले। योग प्रक्रिया में भी ऐसी व्यवस्था है। पर जब समय आए तो इसमें से पुनः जाग्रत हो जाय। काठीओं का गांव है। नानाभाई कई बार आते हैं। मुझे कई बार पोस्टकार्ड लिखते थे। भाई, मैं ज्यादा डाक पढ़ता नहीं। क्योंकि पत्र प्रशंसा के होते हैं जो मेरे लिए जरूरी नहीं हैं या निंदा के होते हैं, इससे हमारा चित्त बेवजह खराब होता है। अतः मैं पत्र ज्यादा पढ़ता नहीं हूं। पर इस आदमी के अक्षर अभी भी मेरी नजर में छा गये है। उसमें उन्होंने अनुभव लिखा हो, वर्तमान में क्या नवीन हो रहा है; स्रोत सूख रहा है, इसे लेकर उद्वेग-ग्लानि भी व्यक्त किये हो। कभी कौंध होने से कलम पकड़ी है, ऐसा उत्साह भी दिखाया हो। उन्होंने ऐसे पत्र मुझे लिखे हैं।

मैंने वसंतबापू से कहा, मैं तो ऐसा नहीं कहूंगा। आवश्यक्ता क्या है? पर जब उन तक यह बात पहुंची तो उमंग से कहा, मुझे जानकारी दीजिए तो मैं लिखूं। फिर मैं सेंजल गया। वे भी आये। सावरकुंडला में चाय-पानी कार्यक्रम बना। वंडा ख़बर पूछने आऊं। नई ख़बर लेने आऊं। अपने यहां ख़बर पूछने की ही आदत है। पर जब नई ख़बर लेते रहेंगे तब भारत महान बनेगा। इसीलिए मैं जाता था। क्षत्रियों में एक बात देखी है कि उन्हें गोर, पंडित और साधु पर बहुत श्रद्धा रहती है। वे बहुत आदर देते हैं। उनके कमरे में सूरज न जा सके पर साधु-ब्राह्मण जा सकते हैं। यह उनकी श्रद्धा है। मुझसे पूछा, 'बापू, मैं लिखूं। मुझे जानकारी दीजिए। मेरे पास खास नहीं है।' मैं इस परंपरा में आया हूं इसका आनंद है। मैंने कहा, 'कहीं भी अहोभाव में बिना खिंचे; इसमें मोरारिबापू भी संलग्न है अतः प्लीज़ कोई चमत्कार नहीं आना चाहिए। ऐसा होता होगा या नहीं, मुझे पता नहीं। पर अब साधुओं को ऐसा श्रम लेने की जरूरत नहीं। पैर टूटा हो तो अब जयपुरमें लगा देते हैं! मैंने कहा कि आप को मेरे प्रति आदर है। अत्यंत ऋजु। आंखें भर आई। 'मुझसे अब लिख नहीं जाता!' साहित्योपासक की यही बड़ी चिंता होती है कि अब मैं कुछ नहीं कर सकता। यह उनकी पीड़ा है। मैंने कहा, मेरे नाम के साथ कुछ जुड़ा आए तो कृपा कर आप कुछ मत करियेगा। शायद मेरे प्रति भाव जगे तो चमत्कारों की ओर ध्यान मत दीजियेगा। वे हंस पड़े। मैंने

कहा, 'मैं आप के स्वभाव को जानता हूं। अभी मनोहरभाई ने कहा कि आप ने संकीर्णता तोड़ डाली है। क्षत्रिय होने के बावजूद क्रिया-कर्म से इन्कार किया है। बहन-बेटियों की स्वतंत्रता का सन्मान किया। अत: मैंने कहा कि आप मेरी बात से सहमत होंगे। मेरे प्रति आदर के कारण ऐसी-वैसी बात मत लिखियेगा जिससे मैं नाराज़ हो जाऊं।' वे प्रसन्न हुए।

इस तरह हमारा संपर्क बना रहा। मेरे तो वरिष्ठ जन। परस्पर आदरभाव रहा। 'रामचरित मानस' में पंक्ति है कि यह सरस्वती कहां से आती होगी? आप ने गंभीरता से दूधात सा'ब, रतिदादा, मनोहरभाई, केसरभाई अपने वक्तव्य में मडिया और मेघाणी को जोड़े और उनकी वाणी सुनी होगी तो लगेगा ये वक्तव्य हलके-फुलके नहीं है। वे भी इस कोटि के उपासक थे। उनकी ग्रामीण भाषा से मैं परिचित हूं। उनकी शब्दोपासना जबरदस्त थी। तब प्रश्न होता है कि सरस्वती आई कहां से? प्रायमरी स्कूल में रहे। मुझे तुलसी की चौपाई याद है-

भगति हेतु बिधि भवन बिहाई ।
सुमिरत सारद आवति धाई ।।

सरस्वती तो ब्रह्मा के भवन में रहती है। जब उसे कोई भीतर से पुकारता है या तो 'कबि उर अजिर नचावहिं बानी।' कवि और शब्द के उपासक के हृदयरूपी आंगन में सरस्वती को नृत्य करने की इच्छा होती है। ब्रह्मा भवन से लंबा मार्ग तय करना होताहै। वहां से क्यों आती है? नानाभाई के हृदय में सरस्वती कहां से आती है? ब्रह्मा का सदन छोड़कर सरस्वती भक्ति के लिए आती है। मेरी तरह माला फेरने को भक्ति कहते हैं? यह मुझे पसंद है। पर क्या माला फेरनी है? भक्ति मानी समर्पण, बलिदान। अपने संसार में प्रतिशोध की वृत्ति विकसित होती रहती है। कथनी-करनी में भी काफी अंतर पड़ता

जाता है। ऐसे समय में बलिदान एक भक्ति है। केसरभाई ने कहा कि शूरवीरता, पराक्रम किसी एक कौम के विशेष गुण हो सकते हैं। कुबूल, परंतु शहादत यह जातिविशेष अधिकार नहीं है। वह कहीं भी हो सकती है। नानाभाई के मन में जो विचार आते होंगे जो प्रागट्य होते होंगे तब भक्ति-बलिदान के लिए सरस्वती ब्रह्मसदन से निकलकर लंबा मार्ग तय कर मोहल्ले में आई होगी। हम किसीके यहां मेहमान बनें तब चाय-पानी से पहले थकान उतारने के स्नान करते हैं। उसी तरह यह सरस्वती को भी होता है कि किसीके हृदय में उतरने से पूर्व ऐसे झरने में स्नान कर लूं तो लम्बी मंज़िल की थकान उतर जाए। अत: वह स्वयं स्नान करने की इच्छा करती है-

राम चरित सर बिनु अन्हवाएँ ।
सो श्रम जाइ न कोटि उपाएँ ।।

रामचरित्र मानी क्या? क्या रामकथा? रामचरित्र बड़े बलिदान की कथा है। 'महाभारत' में जितने पर भी सब हारे। 'रामायण' में जितने हारे ये सभी जीते। ऐसी सरस्वती आती है पर शब्दोपासक के हृदय में समर्पण की बातें लिखने का उत्साह न हो, जलाशय छलकता न हो तो उसे स्नान की अनुकूलता नहीं मिलती है; तो करोड़ो उपाय करने पर भी सरस्वती की थकान उतरती नहीं है। मुझे ऐसा लगता है कि नानाभाई की कुटियां में सरस्वती ने स्नान किया है। ब्रह्माके घर से आई हुई सरस्वती विश्राम प्राप्त होगी श्रममुक्त होगी तो ही ऐसी बलिदान की गाथा उसकी कला से प्रगट होती है। साहब, मूल में तो नानाभाई उपासक है।

मैं छोटा था तब मेरे गांव में चरवाहों का 'भर्यु' होता था। तीन दिनों तक उनकी देवी का पूजन होता था। फिर भोज होता था। हम मार्गी भोजन कर लें। वहां एक चरवाहा भगत थे। वे रामसागर लेकर गाए। मुझे आज भी याद है, साहब-

इ रे मारग मारे जोवा कबीर के,
इ रे मारग मारे जोवा रे...

कबीर को कौन-सा मारग देखना होगा? कौन से मारग का वह खौजी रहा होगा?

मुझे लगता है, नानाभाई के नाम के साथ, एक पुण्य स्मरण के साथ, नगरपालिका एक रास्ते को सुपथ बना रही है। अब वह गली नहीं रही। जब एक साहित्यकार का नाम दिया है तब उसे गली मत समझना। गली हो तो ऐसा भाव रखिए-

'शेरी वळावीने सज करुं घर आवो ने...'

अब यह गली नहीं है। यह ऐसी गली है, जिसमें प्रवेश पाने का अधिकार सब को है। यही गली बांधेगी नहीं, मुक्त रखेगी। कबीरसाहब के स्थान पर यह समारंभ हुआ। मार्गी साधु के हाथों मार्ग की तख्ती का अनावरण हुआ। कबीर भी किसी मार्ग को खोजते हैं। यह सहजरूप से एकत्र हुआ है। हमें कई बार एकत्र करना पड़ता है। जब अस्तित्व की इच्छा हो तब हमें पता नहीं रहता पर हमारे अज्ञात चित्त से ऐसे शुभ संकल्प उठते हैं। ईश्वर की इच्छा से सब एकत्र हो जाता है। अत: एक मार्गी साधु के रूप में प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। यह केवल मारग विमोचन नहीं, पर उन्होंने बताये एक बलिदान की कथा किताब का आज विमोचन है। उस मारग पर पैदल चला जाये पर इस मारग पर यदि जी जान से चलेंगे तो हमारे लिए त्याग-समर्पण के कितने ही मारग खुल जायेंगे। उस पर चलकर हम अपने जीवन को धन्य मानेंगे।

(नानाभाई ह. जेबलिया मार्ग नामाभिधान समारोह के अवसर पर सावरकुंडला (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य ता.९-१०-२०१४)

विद्या, विनय, नैपुण्य, अभय और शील से प्रतिभा का निर्माण होता है

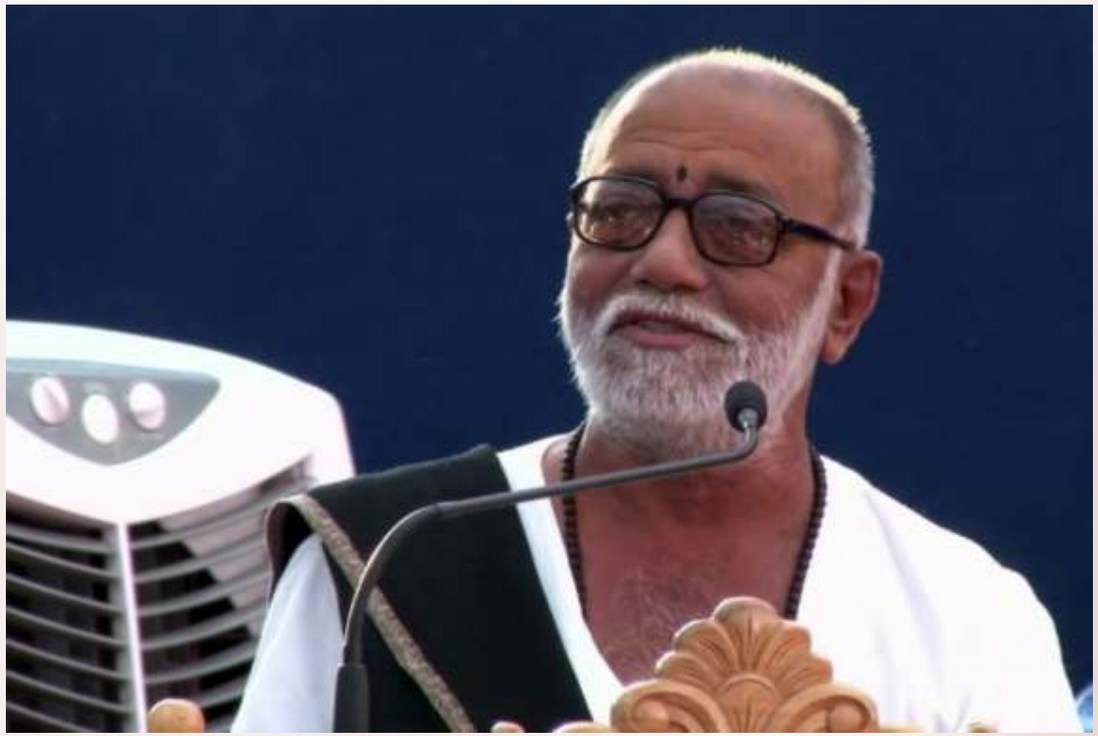

पुनित स्मृति समारंभ में मोरारिबापू का प्रासंगिक वक्तव्य

महेशभाई की स्मृति-वंदना के लिए हम सब यहां एकत्र हुए है, ऐसी उनकी अनेकविध सेवामयी चेतना को मेरे प्रणाम। उनको अतिप्रिय ये बच्चें, उनको प्यार-दुलार। इस स्मृति-वंदना प्रसंग पर मंच पर विविध क्षेत्रों के उपस्थित सब गुरुजन और आप सभी भाईयों और बहनो। आप गंभीरता से न ले। मैं विनोद में कहता हूं कि मैंने चार से साड़े पांच का समय दिया था। मैं ठीक चार में तीन मिनिट कम में आ गया था। अब साड़े पांच में तीन मिनिट बाकी है! अब मुझे क्या करना चाहिए, समझ में नहीं आता! पर मुझे संचालकश्री ने काफी बल दिया। उन्होंने कहा कि 'अब मोरारिबापू आशीर्वाद देंगे।' एक मिनिट से ज्यादा आशीर्वाद नहीं होता। बाप, साड़े पांच बजे यह कार्यक्रम पूरा होनेवाला था! पर थोड़ा कहूं।

मेरा महेशभाई के साथ तीस साल का आत्मीय संबंध रहा है। उनके नाम से मार्ग का नामाभिधान हुआ। नवसारी नगरपालिका को बहुत-बहुत धन्यवाद। उनकी स्मृति के लिए 'स्मृति-मंदिर' में हमने प्रवेश किया। अभी कहा गया कि महेशभाई जीवित होते तो अपनी मूर्ति

रखने न देते परंतु आप सब ने अच्छा निर्णय किया और बच्चों के दादाजी सदैव दिखाई दे अत: मूर्ति रखने का एक अच्छा निर्णय किया।

मैं अब भी किसी मूर्ति का अनावरण करता हूं तब मुझे हंमेशा ऐसा विचार आता है कि 'श्रीमद् भागवत' में शुकदेवजी ने कहा है कि मूर्ति अनेक प्रकार की होती है; सुवर्ण, चांदी, तांबा या पंचधातु की भी हो सकती है; मिट्टी, रेत, काष्ट की मूर्ति भी हम बना सकते हैं। जगन्नाथ भगवान हमारे सामने हैं। भागवतकार के कथनानुसार प्रतिमा इतने प्रकार की हो सकती है। फिर उसमें प्राण प्रतिष्ठा होती है। मुझे सदैव विचार आता है कि प्रतिमा तो इतने प्रकार की होती है पर प्रतिभा किसमें से बनती है? समाज को प्रतिभा की बहुत जरूरत है। प्रतिभा किस धातु से बनती है? सुवर्ण में से? वो तो पूरी लंका सोने की थी। पर लंका में प्रतिभा बहुत कम निकली। प्रश्न है कि इक्कीसवीं सदी में प्रतिभा निर्माण किस प्रकार होगा? उसके लिए कैसी सामग्री इकठ्ठी करनी पड़ेगी?

जब मैं ऐसा विचार करता हूं तब 'रामचरित मानस' की एक पंक्ति में मुझे जवाब मिलता है, जो आप के सामने रखता हूं। पांच वस्तु से प्रतिभा निर्माण होता है। न तो मैं शास्त्रार्थ करने आया हूं न तो मुझे कुछ सिद्ध करना है। महेशभाई की स्मृतिवंदना के अवसर पर यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है। मैं पांच वस्तु आप के सामने रखता हूं। आप महेशभाई के निकट रहे हैं अत: आप का भीतर इसकी ज्यादा अनुमोदना करेगा। ये पांच वस्तु इस मनुष्य में थी। संस्था का नाम उन्होंने 'ममता-मंदिर' रखा तब मुझे पहला प्रश्न यह होता है कि ममता को तो निकाल देनी चाहिए। शास्त्रों ने कहा है कि निर्मम होना चाहिए। ममता तो रात्रि, अंधकार और गंदकी है। हमारी संतवाणी में कहा गया है। भजनिकों ने गाया है-

मारी ममता मरे नहीं एनुं मारे शुं करवुं?

मुझे कहने दीजिए ममता प्रथम क्रम पर हो तो दोष है पर दूसरे क्रम पर हो तो सद्गुण है। साथ में समता हो तो सद्गुण है। इस मनुष्य में समता थी। बच्चों की सेवा कौन करे? विकलांगों का हाथ कौन थामे? ऐसी ममता सद्गुण बन गई। क्योंकि उसके मूल में समता थी। कहीं पर भी विषमता नहीं। महेशभाई की प्रतिमा तो प्रतिष्ठित की पर प्रतिभा को लेकर कहना चाहता हूं।

विद्या विनय निपुन गुन सीला ।

हमारी देह पंच महाभूत से बनी है। मूर्ति पंचधातु से बनती है। पर प्रतिभा के पांच तत्त्व कौन से हैं?

प्रथम तत्त्व विद्या है। प्रतिभा का प्रथम तत्त्व विद्याप्रीति या विद्याविस्तार रुचि है। इस मानव में विद्याप्रीति थी इसलिए आदिवासी विस्तार में ऐसी संस्था स्थापित करने का शिव संकल्प रखा। स्वयं विद्या प्रीति और विद्या रुचि इस व्यक्ति की प्रतिभा का प्रथम कारण बनता है। विद्या को भाषा के रूप में ले तो भी इस मानव की भाषा सम्यक् थी।

दूसरा तत्त्व विनय है। प्रतिभा निर्माण विनय से होता है। वे बहुत विनयी थे। नवसारी से रात को तीन बजे निकले और तलगाजरडा बारह बजे पहुंचे और मैं अपनी व्यस्तता के कारण अस्वीकृति दूं तो भी प्रसाद लेकर हंसते चेहरे से निकल जाये! दूसरा हो तो बुरा मान जाय। छोटे लोग और युवाओं के प्रति उनका विनय अविस्मरणीय है। साउथ अफ्रिका में युवाओं को एकत्र कर आदर और प्रेम से जिस विनय की प्रस्तुति होती थी

इसका मैं साक्षी हूं। मैंने महेशभाई में यह तत्त्व देखा है। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

तीसरा तत्त्व नैपुण्य है, माने कौशल्य। कर्म कौशल्य। 'योग: कर्मषु कौशलम्।' 'भगवद्गीता' ने कहा। एक किसान ठीक से कृषि करे तो वह उसका योग है। ऐसा 'गीता' ही कह सके। इतना उच्च, अद्भुत यथार्थ चिंतन इस देश का योगेश्वर कृष्ण ही दे सकते हैं। तार टूटे नहीं और अपना भीतरी तार भी उसके साथ जुड़ा रहे, ऐसा कांतने का कार्य भी योग है। एक विद्यार्थी ठीक तरह से स्वाध्याय वह भी योग है। निज कार्य में कौशल्य वही योग है, जिसे हम नैपुण्य कहते हैं। इस मनुष्य में कर्म कौशल्य बहुत था।

जिसे 'भगवद्गीता' दैवी संपदा कहती है, वह है 'अभयम्' और यह गुण जिसमें हो उसमें सभी तत्त्व अपने आप आ जाते हैं। 'अभयम्'; यहां लिखा है 'सत्य', 'वात्सल्य', 'करुणा।' सत्य के यहां अभय नामक बालक ने जन्म लिया। सत्य हो वहां अभय होता ही है। अभय सत्य से जन्म लेता है। एक बार हम में अभय आए फिर अपने आप अन्य गुण आ ही जाते हैं। हम आदमी है। कमी रह जाती है। कितने ही धर्मपंथो में कहीं-कहीं अभक्ष्य भक्षण होता था। हमें सत्य का स्वीकार करना चाहिए। ठाकुर रामकृष्ण स्वयं कहते थे, आज मुझे बहुत इच्छा हुई और मैंने मछली खाई। कमज़ोरियां आती रहती है। दीक्षित दनकौरी का बहुत सुंदर शे'र है-

या तो कुबूल कर मुझे कमज़ोरियों के साथ,
या छोड़ दे मुझे मेरी तनहाईयों के साथ।

तो, सभी गुण हम में आ जाय, ऐसा कुछ होता नहीं है। इतना सब जरूरी भी नहीं है। मुझे कहना है कि एक अभय गुण आए और दूसरे गुण न आए तो भी चिंता नहीं। क्योंकि अभय सत्य की संतान है। महेशभाई सत्य-सूत्र लेकर बैठे हैं तब हमें स्वीकारना चाहिए की उनमें अभय था।

सुंदर मूर्ति बने पर उसमें प्राण न हो तो? प्रतिभा का प्राणतत्त्व शील है। हमारे सौराष्ट्र की गंगासती तो यों कहती है; दूसरे गुण न हो तो कोई बात नहीं पर-

शीलवंत साधुने वारे वारे नमीए...

पांचवां तत्त्व शील है। यहां कार्यक्रम के आरंभ में प्रार्थना हुई, साहब! उसीसे पता चल गया कि कार्यक्रम कैसा होगा? यूं ही मनुष्यमें शील आ जाय फिर प्रतिभा का तेज बढ़ता ही जाता है। मैं अपनी वाणी व्यर्थ नहीं गंवाता पर मैंने जो अनुभव किया तो मैं उस चेतना के बारे में कहूंगा कि इस मानव में विद्यारुचि, विद्याविस्तार रुचि, छोटे लोगों के प्रति उनका विनय, कौशल्य के साथ कर्मशीलता और बड़े से बड़ा गुण अभय और विशिष्ट निजी शील। इन पांचों से लगता है, वह प्रतिभा अपने साथ थी। मूर्ति तो हम आज स्थापित करते हैं पर ऐसी प्रतिभाएं समाज में होती रहे अत: महेशभाई की ऐसी जीवंत प्रतिभा इस मूर्ति द्वारा हम सब को प्रेरणा देती रहेगी ऐसी मेरी पूर्ण श्रद्धा है।

मैं यहां आ सका; मेरी अनुकूलता का स्वीकार किया गया बिना आपत्ति के; तो इसे कहते हैं प्रेम। उर्दू का शे'र याद आता है-

बड़ा अजीब है यह सिलसिला उनकी मोहब्बत का,
न उसने कैद में रखा, न हम फरार हो पाए।

मैं यहां आ सका इसका मुझे हृदयपूर्वक आनंद है। मैं अपने हृदय की वंदना इस स्मृति वंदना के अवसर पर इस चेतना को समर्पित करता हूं।

(पुनित स्मृति समारंभ (२०१४) में नवसारी (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य: ता.१६-२-२०१४)

સાંધ્ય-પ્રસ્તુતિ

समस्त जगत मंगल से भरा है, मंगलभवन है। इसमें कुछ विशेष मंगल है। मंगल–अमंगल के बीच यहां भेद नहीं है। अपनी इन्द्रियों के पांच विषय है – शब्द, रूप, रस, स्पर्श, गंध। इस जगत में कौन–सा शब्द मंगल है? पांच शब्दों को मंगल जानिए। पांच प्रकार के वचन विशेष मंगल है। आदि वचन ले तो हमारे लिए वेदवचन विशेष मंगल है। वेदों में से निकले उपनिषद भी ऐसा वचन कहे, 'मातृ देवो भव। पितृ देवो भव।' हमारे लिए यह विशेष मंगल है। कोई भी व्यक्ति हो पर जिसके मुंह से सद्वचन निकले वह विशेष मंगल है। फिर कौन कहता है, इसे मत देखिए। वचन सद् होना चाहिए। वेदवचन मंगल है; सद्वचन मंगल है। तीसरा मंगल सद्गुरुवचन; हमें जहां श्रद्धा हो, चाहे कुछ भी हो जाय वहां से श्रद्धा नहीं उठा लेनी है। चौथा मंगल, चौथा शब्द प्रियजन का वचन। आपकी प्रिय व्यक्ति का वचन यह विशेष मंगल है। किसी भी संबंध में प्रियता हो तो ये वचन विशेष मंगल है; प्रियजन का वचन यह विशेष मंगल है। परमतत्त्व का वचन जो हमें विशेष भूमिका पर पहुंचाता है, ऐसा एक परमतत्त्व का वचन विशेष मंगल है। ये पांच वचन जगत में, मंगलभवन में, विशेष मंगल है।

– मोरारिबापू

जय सीयाराम